thearyasamaj.org

ओ३म्

दयानन्दसन्देश

आर्ष साहित्य प्रचार ट्रस्ट का मासिक पत्र

फरवरी २०१५

Date of Printing = 05-02-15
प्रकाशन दिनांक= 05-02-15

वर्ष ४४ : अङ्क ४
दयानन्दाब्द : १९१
विक्रम-संवत् : माघ-फाल्गुन २०७१
सृष्टि-संवत् : १,९६,०८,५३,११५

संस्थापक : स्व० ला० दीपचन्द आर्य
प्रकाशक व प्रबन्ध सम्पादक : धर्मपाल आर्य
सम्पादक : ओम प्रकाश शास्त्री
व्यवस्थापक : विवेक गुप्ता

कार्यालय :

दयानन्दसन्देश (मासिक)

४२७, नया बांस, मन्दिर वाली गली,
खारी बावली, दिल्ली-६
दूरभाष : २३९८५५४५, ४३७८११९१
चलभाष : ९६५०६२२७७८
E-mail : aspt.india@gmail.com

एक प्रति ५.०० रु०
वार्षिक शुल्क ५०) रुपये
आजीवन सदस्यता ५००) रुपये
विदेश में २०००) रुपये

इस लेख में

- शिव जी के पौराणिक... २
- वेदोपदेश ३
- मन की बात... 5
- गीता में ध्यान 7
- महाशिवरात्रि 9
- सुनो स्वरूपानन्द जी..... 12
- शंकराचार्य जी बोले.... 15
- शंका समाधान 17
- ईश्वर का भय 24

सत्यार्थप्रकाश

प्रचार संस्करण – ३००० रुपये सैकड़ा
स्पेशल (सजिल्द) – ५००० रुपये सैकड़ा में प्राप्त करें।

thearyasamaj.org

शिव जी के पौराणिक अंधभक्तों से नम्र निवेदन

(वै. रामनाथ आर्य, विजयगढ़ अलीगढ़)

संसार के देशभक्त लोगों ने अपने देश के महापुरुषों को अपनी पूजा का आधार बनाया है। मुसलमानों ने अपने देश के महापुरुष मोहम्मद को खुदा का पैगम्बर माना। यूरोप वालों ने ईसा को साक्षात खुदा का बेटा मानकर उपासना की। ये सभी महापुरुष उनके देश के वासी थे। परन्तु पौराणिक हिन्दू ने अपना उपास्यदेव ऐसों को माना है, जो उसके देश के तो क्या कभी उसकी जमीन के भी निवासी नहीं रहे। इन विदेशी, शिव, गणेश व विष्णु आदि देवताओं के भक्त सदा इसीलिये यवनों की मार खाते रहे कि इनको कभी सर्वव्यापक जगदाधार परमेश्वर का विश्वास नहीं रहा। परमात्मा से विमुख लोगों की जो दुर्दशा होनी चाहिए सदा विदेशियों ने उनकी वही की। खेद है कि अब भी इन अंधविश्वासी धर्मभक्त भोले हिन्दुओं को समझ नहीं आती है। शिव-गणेश आदि देवता गीता प्रेस गोरखपुर द्वारा प्रकाशित संक्षिप्त स्कन्द पुराण काशी खंड पूर्वार्ध पृष्ठ 579 के अनुसार विदेशी हैं।

आज प्रकाश एवं ज्ञान-विज्ञान के युग में भी पढ़ा-लिखा हिन्दू धर्म के मामले में अंधा बनकर पोप-पुजारी एवं पंडित के पीछे चलता है। शिवलिंग के हाथ जोड़ता है। उससे मिन्नतें माँगता है, उसके लिए मंदिर बनवाता है। जमीन-आसमान के सारे भौतिक विज्ञान को समझने वाला वैज्ञानिक, कानून की बाल की खाल खींचने वाला वकील-ब्यौपार में भू-मण्डल भर के हिसाब की जोड़-तोड़ लगाने वाला गणितज्ञ व्यापारी, समस्त शास्त्रों को घोटकर पी जाने वाला संस्कृत का सनातनी पंडित कठिन से कठिन मसलों को तय करने की सूक्ष्म बुद्धि रखने वाला न्यायाधीश इन पत्थरपूजक पुजारियों के हाथ सारी बुद्धि बेचकर शिवजी की मूत्रेन्द्रिय के सामने सर नवाता फिरता है और यह नहीं सोचता कि आखिर यह शंकर की मूत्रेन्द्रिय की नकल ही तो है, इसे पूजने से क्या मिलेगा।

संसार का वैज्ञानिक आकाश में उड़ने को हवाई जहाज बनता है, अन्य लोकों में जाने को अन्तरिक्ष-यान बना रहा है, सागर की छाती पर जहाज दौड़ाता है, संसार में वैज्ञानिक आविष्कारों के बल पर व्यापारिक व सैनिक साम्राज्य स्थापित करता है, अपने देश की जनता को समृद्ध बनाता है और मानव जाति की उन्नति का यत्न करता है, पर हमारा हिन्दू समाज महादेव के पत्थर के लिंग को पानी से रगड़-रगड़ कर धोने में ही अपनी खोपड़ी खपाता रहता है। इस भोले हिन्दू को इस बात की कोई चिन्ता नहीं है कि इसके इन्हीं पाखंडों के कारण 11 करोड़, हिन्दू मुसलमान बन गये, लगभग 1 करोड़ ईसाई हो गये, 40 लाख सिख हो गये, 11 लाख जैनी हो गये, लाखों की संख्या में अछूत कहा जाने वाला दलित वर्ग बौद्ध बन गया। नीलकंठ शास्त्री जैसे लाखों शिक्षित हिन्दू लिंगपूजा के पाखंडों के कारण हिन्दू-धर्म से घृणा होने पर विधर्मी बन गये।

पढ़ा-लिखा शिक्षित नौजवान इन्हीं गंदी बातों के कारण ईश्वर व धर्म से विमुख होकर घोर नास्तिक बनता जा रहा है, पर इस भोले हिन्दू को अपने घर-समाज-स्वास्थ्य, संतान की उन्नति एवं देश की उन्नति का कोई ध्यान नहीं है, उसका ध्यान हर समय शिव-लिंग पर जल चढ़ाने में है, ताकि उस पत्थर के लिंग में से ज्वालामुखी फिर न फूट निकले, जिससे सनातनी संसार

शेष पृष्ठ 27 पर

thearyasamaj.org

ओ३म्

वेद सब सत्यविद्याओं का पुस्तक है। वेद का पढ़ना-पढ़ाना और सुनना-सुनाना सब आर्यों का परम धर्म है। —महर्षि दयानन्द

वेदोपदेश— सब मनुष्यों को एक सर्वव्यापक परब्रह्म की ही उपासना करने योग्य है क्योंकि वही परमात्मा जगत् का कर्त्ता, धर्ता और सब सूर्यादि लोकों का निर्माण और भ्रमण कराता है।

स्वयम्भ, ब्रह्मा ऋषिः। परमात्मा (ईश्वर) देवता। निचृत् त्रिष्टुप् छन्दः। धैवतः स्वरः॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

वह परमेश्वर कैसा है, यह फिर उपदेश किया है।।

ओ३म्— येन द्यौरुग्रा पृथिवी च दृढ़ा येन स्व स्तभितं येन नाकः।
यो ऽ अन्तरिक्षे रजसो विमानः कस्मै देवाय हविषा विधेम॥

(यजु० ३२। ६)

पदार्थः – (येन) जगदीश्वरेण (द्यौः) सूर्यादि-प्रकाशवान पदार्थः (उग्रा) तीव्रतेजस्का (पृथिवी) भूमिः (च) (दृढ़ा) दृढीकृता (येन) (स्वः) सुखम् (स्तभितम्) धृतम् (येन) (नाकः) अविद्यमान दुःखो मोक्षः (यः) (अन्तरिक्षे) मध्यवर्तिन्याकाशे (रजसः) लोकसमूहस्य, लोका रजांस्युच्यन्त इति निरुक्तम् (विमानः) विविधं मानं यस्मिन् सः (कस्मै) सुखस्वरूपाय (देवाय) स्वप्रकाशाय सकलसुखदात्रे (हविषा) प्रेमभक्तिभावेन (विधेम) परिचरेम प्राप्नुयाम वा।

सपदार्थान्वयः —हे मनुष्याः! (येन) जगदीश्वरेण (उग्रा) तीव्रतेजस्का (द्यौ) सूर्यादि प्रकाशवान् पदार्थः (पृथिवी) भूमिः (च) (दृढा) दृढीकृता (येन) जगदीश्वरेण (स्वः) सुखं (स्तभितम्) धृतम् (येन) जगदीश्वरेण (नाकः) अविद्यमान दुःखो मोक्षः स्तभितो (योऽन्तरिक्षे) मध्यवर्तिन्याकाशे वर्तमानस्य (रजसः) लोकसमूहस्य (विमानः) विविधं मानं यस्मिन् सः अस्ति तस्मै (कस्मै) सुख स्वरूपाय (देवाय) स्वप्रकाशाय सकल सुखदात्रे वयं (हविषा) प्रेमभक्तिभावेन (विधेम) परिचरेम, प्राप्नुयाम वा, एवं यूयमप्येनं सेवध्वम्॥

भाषार्थः—हे मनुष्यो! (येन) जिस जगदीश्वर ने (उग्रा) तीव्र तेज वाले (द्यौः) सूर्य आदि प्रकाशवान् पदार्थ (च) और (पृथिवी) भूमि (दृढ़ा) दृढ़ की है

thearyasamaj.org

(येन) जिस जगदीश्वर ने (स्वः) सुख को (स्तभितम्) धारण किया है (येन) जिस जगदीश्वर ने (नाकः) दुःखरहित मोक्ष को धारण किया है (यः) (अन्तरिक्षे) जो मध्यवर्ती आकाश में वर्तमान (रजसः) लोकसमूह का (विमानः) विविध प्रकार से निर्माण करने वाला है, उस (कस्मै) सुखस्वरूप (देवाय) स्वप्रकाशस्वरूप सकल सुखदाता ईश्वर के लिए हम (हविषा) प्रेम भक्ति भाव से (विधेम) सेवा करें, या उसे प्राप्त करें, इस प्रकार तुम भी इसकी सेवा करो।

भावार्थः–हे मनुष्याः! यः सकलस्य जगतो, धर्ता, सर्वसुखप्रदाता, मोक्षसाधक, आकाश इव व्याप्तः परमेश्वरोऽस्ति तस्यैव भक्तिं कुरुत।

भावार्थ–जो सकल जगत् को धारण करने वाला, सब सुखों का दाता मोक्ष का साधक आकाश के समान व्याप्त परमेश्वर है, उसकी ही भक्ति करो।।

अन्यत्र व्याख्यात–(येन) जिस परमात्मा ने (उग्रा) तीक्ष्ण स्वभाव वाले (द्यौः) सूर्य आदि (च) और (पृथिवी) भूमि को (दृढ़ा) धारण (येन) जिस जगदी ने (स्वः) सुख को (स्तभितम्) धारण और (येन) जिस ईश्वर ने (नाकः) दुःखरहित मोक्ष को धारण किया है। (यः) जो (अन्तरिक्ष) आकाश में (रजसः) सब लोक लोकान्तरों को (विमानः) विशेष मानयुक्त अर्थात् जैसे आकाश में पक्षी उड़ते हैं, वैसे सब लोकों का निर्माण करता और भ्रमण कराता है, हम लोग उस (कस्मै) सुखदायक (देवाय) कामना करने योग्य परब्रह्म की प्राप्ति के लिए (हविषा) सब सामर्थ्य से (विधेम) विशेष भक्ति करें।

(संस्कारविधि, ईश्वरस्तुति–प्रार्थनोपासना)

(''दयानन्द-यजुर्वेद-भाष्य-भास्कर'' से उद्धृत, व्याख्याता–स्व० श्री पं० आचार्य सुदर्शनदेव)

●●

वैदिक विद्वान्-पं. राजवीर शास्त्री-पुण्य संस्मरण

(डॉ. भवानीलाल भारतीय)

सुख्यात वैदिक विद्वान् तथा दयानन्द साहित्य के मर्मज्ञ पं. राजवीर जी का गत् 24 सितम्बर को लगभग 76 वर्ष की आयु में निधन हो गया। उनका अध्ययन गुरुकुल झज्जर में सुयोग्य विद्वानों के निरीक्षण में हुआ था। वे वेद, व्याकरण, निरुक्त तथा दयानन्दीय वाड्मय के अद्वितीय पण्डित थे। कालान्तर में लाला दीपचंद आर्य द्वारा स्थापित आर्ष साहित्य प्रचार ट्रस्ट के प्रकाशन प्रभारी होकर दिल्ली आ गये तथा ट्रस्ट द्वारा प्रकाशित साहित्य का सम्पादन करते रहे। (टिप्पणी-शास्त्री जी ''ट्रस्ट'' के प्रधान थे-सम्पादक) वे सरकारी सेवा (अध्यापक) से निवृत्त होने के पश्चात् मोदी नगर रहते थे और वहीं से **दयानन्द संदेश** का सम्पादन भी करते थे।

पं० राजवीर ने ट्रस्ट द्वारा प्रकाशित स्वामी जी की अनेक कृतियों का सम्पादन तथा पाठ निर्धारण किया था। सत्यार्थ प्रकाश, संस्कार विधि, ऋ.भा. भू. आर्याभिविनय आदि ट्रस्ट द्वारा प्रकाशित ये संस्करण विशेष महत्व के हैं। मेरा शास्त्री जी से आद्यन्त स्नेह रहा। वे अत्यन्त विनम्र थे। वर्षों पूर्व भेंट हुई थी। उनकी कीर्ति चिरस्थायिनी है।

❑❑

thearyasamaj.org

मन की बात

(ओमप्रकाश शास्त्री, मो. : 09416988351)

आदरणीय पाठकगण!

काफी दिनों से इच्छा थी कि पत्र द्वारा अपने प्रबुद्ध पाठकों को व विद्वान् लेखकों को अपने मन की बात कहूँ। आपकी मासिक पत्रिका "दयानन्द सन्देश" के प्रकाशन के 43 वर्ष हो चुके हैं। इस अवधि में पत्रिका को विद्वानू पाठकों का, सुधी पाठकों का, युवा पाठकों का, विदुषी पठिकाओं का, लेखकों का, कवियों का और आचार्यों का भरपूर स्नेह, सहयोग और सम्मान मिला है और भविष्य में भी मिलेगा, ऐसा मुझे पूर्ण विश्वास है। पत्रिका पाठक और लेखक के मध्य सम्बन्ध स्थापित करने की एक सशक्त कड़ी हैं मेरी प्यारे प्रभु से प्रार्थना है कि पाठक और लेखक को जोड़ने वाली यह कड़ी (पत्रिका) और मजबूत हो ताकि वैदिक विचारधारा से जुड़ने और जोड़ने का यह पावन अभियान अनन्त काल तक श्रद्धापूर्वक और अनवरत चलता रहे। मेरे पूज्य गुरुवर स्व. आचार्य श्री राजवीर जी शास्त्री ने पत्रिका का वर्षों तक सफलतापूर्वक सम्पादन किया। अपने कुशल सम्पादकत्व में पत्रिका को जो गरिमा प्रदान की, उसके लिए मैं विनम्र श्रद्धाञ्जलि के साथ-साथ उनके प्रति अपनी हार्दिक कृतज्ञता ज्ञापित करता हूँ। मेरी भी यही इच्छा है कि पत्रिका सफलता के शिखर तक पहुँचे। इस महान् उद्देश्य की प्राप्ति बिना पाठकों और लेखकों के संभव नहीं है। पत्र के माध्यम से सुधी पाठकों को मन की बात कहने का एक उद्देश्य यह भी है कि दयानन्द सन्देश पत्रिका को अधिक सिद्धान्त समृद्ध कैसे बनाया जा सकता है इस विषय में विद्वान् लेखकों व सुधी पाठकों के सत्परामर्श प्राप्त किए जा सकें। मैं पूज्य विद्वानों के सन्निर्देश और प्रबुद्ध पाठकों के सुझावों की प्रतीक्षा करूँगा। अनेक पाठकों के पत्रिका की प्रशस्ति में मेरे पास सन्देश आये हैं, जिन्हें सुनकर पत्रिका को अधिक गुणवत्ता प्रदान करने का उत्साह बढ़ा है। मुझे यह लिखने में कोई संकोच नहीं कि इन्टरनेट, व्हाट्सप, फेसबुक और ट्विटर के प्रचलन ने पत्रिकाओं के पढ़ने-पढ़ाने का कार्य प्रभावित किया है, लेकिन इसके बावजूद पत्रिकाओं के अध्ययन का अपना अलग ही महत्व है। सामाजिक परिवर्तन हो अथवा राष्ट्रीय जागरण का अभियान हो, सभी परिवर्तनों में पत्रिकाओं का पठन-पाठन मुख्य घटक रहा है। आज हमारे समाज के सामने अनेक चुनौतियाँ हैं जिनका सामना करने की क्षमता हमें पत्रिकाओं के अध्ययन से ही प्राप्त होगी। मेरा आर्य जगत् के विद्वानों/विदुषियों से, युवा लेखकों-लेखिकाओं से कवियों से और कवयित्रियों से और पाठकों से विनम्र निवेदन है कि वे अपने अनुभवों का और अपने गुणों का लाभ अपने प्रेरणा से ओत-प्रोत लेखों द्वारा हमारे प्रबुद्ध पाठकों और समाज को देने की कृपा करें।

मुझे विश्वास है कि मेरे विनम्र अनुरोध पर आप अवश्य विचार करेंगे। महापुरुषों के विषय में, यज्ञों के विषय में, धर्म के विषय में, भारतीय गौरव के विषय में, समाज/राष्ट्र की ज्वलन्त समस्याओं के विषय में, तथाकथित धर्मनिरपेक्षता के विषय में, तथाकथित धर्मपरिवर्तन के विषय में, क्रान्तिकारियों के विषय में, फलित और गणित पर आधारित ज्योतिष के विषय में, दर्शनों के विषय में, जीवन और मृत्यु के विषय में तथा गृहस्थ-धर्म के विषय में आज भी हमारे पाठकों को विद्वानों/विदुषियों व लेखकों/कवियों के लेखों द्वारा मार्गदर्शन की आवश्यकता है। ईसाई मिशनरियाँ व इस्लामिक संगठन देश में मानवता, सामञ्जस्य तथा सामाजिक ताने-बाने को बिगाड़ने में लगे हुए हैं तथा कुछ तथाकथित धर्मनिरपेक्षतावादी लोग व दल उनको कभी प्रत्यक्ष तो कभी अप्रत्यक्ष रूप से प्रोत्साहन देने में लगे हुए हैं। आज हम सबको मिलकर इनका सामना करने के लिए पत्रिका के माध्यम से जन-जागरण का पावन अभियान और तीव्र गति से चलाना है। इस

thearyasamaj.org

अभियान में पाठक और लेखक समाज के हित को ध्यान में रखते हुए एक दूसरे के कन्धे से कन्धा मिलाकर चलें। पत्रिका एक ऐसा पावन सङ्गम है, जिस पर मिलकर दोनों के सम्बन्धों की स्थापना होती है। मैं ईश्वर से प्रार्थना करता हूँ कि पत्रिका का पावन सङ्गम लेखक व पाठक को सदा मिलाता रहे तथा समाज के उपकार की धारा निरन्तर बहती रहे। आदरणीय पाठक वृन्द व लेखक महानुभाव! आपके स्नेह सम्मान और सहयोग का ही परिणाम है कि आपकी पत्रिका (दयानन्द सन्देश) भारत के हर कोने में महर्षि दयानन्द का 'वैदिक धर्म' का प्रचार-प्रसार कर रही है। किसी भी पत्रिका की सफलता के दो ही आधार स्तम्भ होते हैं-सुधी पाठक और लेखक। हमें प्रसन्नता है कि आपकी पत्रिका (दयानन्द सन्देश) के दोनों ही आधार बहुत मजबूत हैं, गम्भीर हैं और समर्पित हैं। युवा पीढ़ी में अश्लील साहित्य का बढ़ता प्रचलन हम सबके लिए चिन्ता का विषय है, युवा पीढ़ी के नैतिक, चारित्रिक, आत्मिक और मानसिक विकास में अश्लील साहित्य एक बहुत बड़ी बाधा है। आओ, हम मिलकर युवा पीढ़ी को "परोऽपेहि मनस्पाप किमशस्ता निशेससि, तन्मे मनः शिवसङ्कल्पमस्तु और विश्वानि देव सवितर्दुरितानि परासुव।" अर्थात् हे पाप! मेरे मन से दूर भाग, हे प्रभो! मेरा मन शिव संकल्पों वाला हो तथा हे प्रभो! सब सुखों के दाता परमेश्वर आप हमारे सम्पूर्ण दुर्गुण और दुर्व्यसनों को दूर कर दीजिए। विद्वान्, आचार्य एवं लेखक/कवि आदि सब मिलकर युवा पीढ़ी को श्रेष्ठ संस्कार प्रदान करने के यज्ञ को और अधिक तीव्रता प्रदान करें और आप द्वारा दिये सद्विचार या हवि को समाज तक पहुँचाने का कार्य **दयानन्द सन्देश** पत्रिका हव्य वाहन बनकर पूर्ण करे, ऐसी मेरी कामना है। पाठक व लेखक महोदय। आज युवा पीढ़ी नकारात्मक विचारधारा की शिकार होती जा रही है तथा हमारी सांस्कृतिक विचारधारा

प ा :

विचारधारा के मलबे तले दबती सी जा रही है। राष्ट्र की इस रीढ़ की हड्डी (युवा पीढ़ी) को पाश्चात्य-विचारधारा के विनाशकारी मलबे से निकालने का काम हम सबके लिए एक चुनौती है। आओ, हम सब मिलकर इस चुनौती का डटकर सामना करें। इसमें हमारा प्रयास होगा कि पत्रिका के माध्यम से युवाओं को, बच्चों को, वैदिक धर्म के जिज्ञासुओं को और स्वाध्याय प्रेमियों को सद्विचारों की सौगात प्रदान की जाए। आर्य जगत् के विद्वानों के वैदुष्य का, उनके चिन्तन का, उनके स्वाध्याय का और उनकी प्रतिभा का

प्रसाद

सुधी पाठकों को सतत् मिलता रहे, ऐसा हमारा प्रयास रहेगा। हमारी पत्रिका का उद्देश्य धन कमाना नहीं अपितु देव दयानन्द के सन्देश को घर-घर पहुँचाना ही पत्रिका का मुख्य ध्येय है और इस ध्येय को पाने में हमें अपने पाठकों और लेखक महानुभावों का पूरा सहयोग मिल रहा है। इसका क्षेत्र और अधिक व्यापक व विस्तृत हो, यही लक्ष्य है। पं० लेखराम जी का वह अमर वाक्य (जो उन्होंने बलिदान होने से पूर्व कहा था) कि आर्यसमाज में तहरीर और तहरीक का काम सतत् चलते रहना चाहिए कभी बन्द नहीं होना चाहिए। हमें लिखने का, पढ़ने का, सुधी पाठकों और विद्वान् लेखकों से पत्र द्वारा बातचीत करने का अमिट उत्साह प्रदान करता रहता है और भविष्य में भी करता रहेगा। अन्त में इस विश्वास के साथ मैं अपने पत्र को समाप्त करुँगा कि समाज को, युवाओं को, बच्चों को, छात्रों को, पुरुषों को, स्त्रियों को, छोटों को, बड़ों को, देशवासियों को, विदेशवासियों को, नेताओं को, अभिनेताओं को, गुरुओं को, शिष्यों को, माताओं को, पिताओं को, पत्रिका के माध्यम से, विद्वानों के, विदुषियों के, कवियों के और कवियित्रियों के सरस, सुगम, सहज, सरल और प्रेरणा से ओत-प्रोत उपदेश और सन्देश मिलते रहेंगे। उपदेशों की शक्ति से जीवन रूपी फूल सद्गुणों की पंखुड़ियों से महकते रहें और राष्ट्र रूपी बगीचे को भी महकाते रहें, सुवासित करते रहें। मुझे पाठकों और लेखकों के सत्परामर्शों की उत्सुकता से प्रतीक्षा रहेगी। पत्रिका को जन-जन तक पहुँचाना, ऋषिवर देव दयानन्द जी के सन्देश को समझना, समझाना, मानना, मनवाना समाज व राष्ट्र की सच्ची सेवा है, ऐसा मेरा मानना है।

❑❑

thearyasamaj.org

गीता में ध्यान प्रक्रिया

(उत्त्रा नेरूर्कर, मो.-09845058310)

भगवद्गीता में महर्षि व्यास ने परमात्मा में ध्यान और समाधि लगाने की प्रक्रिया बताई है। इन दोनों प्रक्रियाओं में उन्होंने भेद नहीं किया है और दोनों को ही 'योग' संज्ञा दी है। यह प्रक्रिया वेद के "युञ्जते मन उत युञ्जते धियः" आदि मन्त्रों से प्रेरित लगती है, परन्तु योगदर्शन जैसा विषद वर्णन यहाँ नहीं पाया जाता। तथापि यहाँ कुछ तथ्य हैं, जो कि नए हैं और ध्यान देने योग्य हैं। इन अंशों का वर्णन मैं इस लेख में कर रही हूँ।

योग-समाधि के कुछ अंश गीता के पंचम अध्याय में दिए गए हैं, परन्तु इनका विस्तार छठे अध्याय में मिलता है। यहाँ व्यास स्थान का निर्देश करते हुए कहते हैं-

शुचौ देशे प्रतिष्ठाप्य स्थिरमासनमात्मनः।
नात्युच्छ्रितं नातिनीचं चैलाजिनकुशोत्तरम्।।
गीता 6/11।।

योगी को चाहिए कि वह ध्यान के लिए आसन एक साफ देश में जमाए, जो स्थान न तो अधिक ऊँचा हो, न अधिक नीचा (ऊँचे में गिरने का भय रहता है, और नीचे में मानसिक स्थिति पर दुष्प्रभाव होता है।) व्यास ने कहा है कि आसन के पहले कुशा घास, फिर मृगछाला और उसके ऊपर वस्त्र बिछाए। तात्पर्य यह है कि आसन पर्याप्त मुलायम और गर्म होना चाहिए, जिससे कि लम्बे ध्यान में बाधा न आए।

तत्रैकाग्रं मनः कृत्वा यतचित्तेन्द्रियक्रियः।
उपविश्यासने युञ्ज्याद् योगमात्मविशुद्धये।।
गीता 6/12।।

उस आसन पर बैठ, इन्द्रियों और चित्त की क्रियाओं को वश में करता हुआ, वह अपने मन को एकाग्र करने का प्रयास करे। इस योग से आत्मा की शुद्धि होती है।

समं कायशिरोग्रीवं धारयन्नचलं शिरः।
सम्प्रेक्ष्य नासिकाग्रं स्वं दिशश्चानवलोकयतन्।।
गीता 6/13।।

पीठ, सिर और गर्दन को सीधा रखते हुए, और सिर को हिलने-डुलने न देते हुए, आँख बन्द करके अपनी नाक की नोक को देखना चाहिए। इस प्रकार आँखों को स्थिर रखना चाहिए, वे सारे में घूमे न। यहाँ नाक को देखने का यही तात्पर्य है कि आँखें स्थिर रहें। पाँचवे अध्याय में इस बात को इस प्रकार कहा गया है-

स्पर्शान् कृत्वा बहिर्बाह्यांश्चक्षुश्चैवान्तरे भ्रुवोः।
प्राणापानौ समौ कृत्वा नासाभ्यन्तरचारिणौ।।
गीता 5/27।।

अर्थात् सारे बाहरी विषयों को बाहर करके, योगी आँखों को दोनों भौंहों के बीच में केन्द्रित करके, प्राण और अपान को (प्राणायाम द्वारा) समान करके नासिका में विचरने वाला कर दे, अर्थात् हल्का कर दे। यहाँ भौहों के बीच में दृष्टि को केन्द्रित करना इस बात का ज्ञापक है कि आप शरीर के किसी भी भाग पर ध्यान लगा सकते हैं, जहाँ आपको सुविधा हो। ऋषियों ने नासिकाग्र और भौहों के बीच को सबसे सुविधाजनक पाया है, इसलिए इन दोनों को व्यास ने भी सूचित कर दिया है।

प्रशान्तात्मा विगतभीर्ब्रह्मचारिव्रते स्थितः।
मनः संयम्य मच्चित्तो युक्त आसीत मत्परः।।
गीता 6/14।।

इस श्लोक में बताया गया है कि ब्रह्मचारिव्रत भी योग के लिए अत्यन्त आवश्यक है। परमात्मा से योग

thearyasamaj.org

प्राप्त होने पर आत्मा प्रशान्त हो जाती है और सारे भय दूर हो जाते हैं।

नात्यश्नस्तु योगोऽस्ति न चैकान्तमनश्नतः।
न चाति स्वप्नशीलस्य जाग्रतो नैव चार्जुन।।
गीता 6/16।।

ध्यान के लिए आवश्यक है कि शरीर संयम में हो, परन्तु अतिसंयम में भी न हो। सो, न तो अधिक भोजन, न उपवास, न तो अधिक सोना, न बिल्कुल न सोने से परमात्मा से योग सम्पन्न हो सकता है।

युक्ताहारविहारस्य युक्तचेष्टस्य कर्मसु।
युक्तस्वप्नावबोधस्य योगो भवति दुःखहा।।
गीता 6/17।।

उसी बात को दूसरे शब्दों में कहते हैं- योगी को युक्त भोजन, आराम, शारीरिक कर्म करना, सोना और जागना चाहिए। इससे ही दुःखों को दूर करने वाली समाधि लगती है।

यदा विनियतं चित्तमात्मन्येवावतिष्ठते।
निःस्पृहः सर्वकामेभ्यो युक्त इत्युच्यते तदा।।
गीता 6/18।।

योगी युक्त तब कहलाता है, जब उसका संयत चित्त परमात्मा में स्थिर होता है। तब वह सारी कामनाओं से मुक्त हो जाता है। इससे यह भी जानना चाहिए कि जब तक परमात्मदर्शन नहीं होते, तब तक कुछ न कुछ कामनाएँ मनुष्य की बनी रहती हैं- एक तो यही कि परमात्मदर्शन हो!

यथा दीपो निवातस्थो नेङ्गते सोपमा स्मृता।
योगिनो यतचित्तस्य युञ्जतो योगमात्मनः।।
गीता 6/19।।

यहाँ व्यास एक सुन्दर उपमा से योगी के चित्त की स्थिति बताते हैं- जिस प्रकार बिना वायु वाले स्थान में दीपक की लौ बिल्कुल हिलती नहीं है, समाधिस्थ अवस्था में योगी का चित्त उसी प्रकार का होता है। लौ इतनी सुन्दर उपमा है क्योंकि थोड़ी-सी भी वायु उसको हिला देती है। इसी प्रकार थोड़ा-सा भी संयम का टूटना ध्यान को तोड़ देता है।

संकल्पप्रभवान् कामांस्त्यक्त्वा सर्वानशेषतः।
मनसैवेन्द्रियग्रामं विनियम्य समन्ततः।।
शनैः-शनैरुपरमेद् बुद्ध्या धृतिगृहीतया।
आत्मसंस्थं मनः कृत्वा न किञ्चिदपि चिन्तयेत्।।
गीता 6/24-5।।

ध्यान में बैठते समय, सारे संकल्प से उत्पन्न कामों को त्याग देना चाहिए, और मन के द्वारा चारों ओर से इन्द्रियों को हटाकर, धीरे-धीरे धैर्ययुक्त बुद्धि के द्वारा, बिना कुछ भी सोचते हुए, अन्तःकरण को परमात्मा में स्थित करना चाहिए। मन में यदि किसी भी प्रकार की जल्दी हो- कार्यालय जाना हो, घर के काम करने हों- तो वह अशान्ति हमें किसी भी प्रकार ध्यान नहीं लगाने देती। इसलिए साधारण गृहस्थियों के लिए सन्ध्या-समय ही ध्यान में मगन होने के लिए सबसे उपयुक्त है- उषःकाल में जब जल्दी उठने से कार्य आरम्भ होने में समय हो, और सायंकाल में जब हम सब कार्यों से निवृत्त हो गए हों। आजकल की भाग-दौड़ भरे जीवन में ये समय यदि आपको उपलब्ध न हों, तो जब भी आपको कार्यों से छुटकारा मिले, तब ध्यान के लिए बैठें।

युञ्जन्नेवं सदात्मानं योगी विगतकल्मषः।
सुखेन ब्रह्मसंस्पर्शमत्यन्तं सुखमश्नुते।।
गीता 6/28।।

योग का फल बताते हुए, व्यास लिखते हैं- इस प्रकार पापों से मुक्त योगी, जो सदा अपनी आत्मा को ब्रह्म से युक्त करता रहता है, वह सरलता से ब्रह्म का संस्पर्श प्राप्त करके, अत्यन्त सुख को प्राप्त कर लेता है। वस्तुतः यह समाधि सुख सभी भौतिक सुखों से इतना ऊपर होता है, कि योगी को उसके बाद वे सभी भौतिक सुख तुच्छ लगने लगते हैं। इसीलिए उसकी सभी कामनाएँ फिर मूल से नष्ट हो जाती हैं। यहाँ एक

शेष पृष्ठ 13 पर

thearyasamaj.org

महाशिवरात्रि

(धर्मपाल आर्य)

महाशिवरात्रि का पर्व पूरे देश में ही नहीं अपितु विदेशों में भी पूरे हर्ष और उल्लास के साथ मनाया जाता है। इस पर्व का पौराणिक जगत् व आर्य जगत् के लिए विशेष महत्व है पौराणिक जगत् के लिए शिवरात्रि है परन्तु आर्य जगत् के लिए शिवरात्रि के साथ-साथ ऋषि बोध-रात्रि उत्सव या ऋषि बोधोत्सव है। पौराणिक जगत् साकार, एक-देशी व एक कल्पित शिव की आराधना के लिए रात-रात भर जागता है। लेकिन आर्य जगत् इस पर्व पर निराकार, सर्वव्यापक तथा अकल्पनीय शिव की आराधना, ध्यान, उपासना और भक्ति करने की प्रेरणा देता है और लेता है। पौराणिक जगत् इस पर्व पर पुराणों में वर्णित अवतार लेने वाले अरिदल संहारी, प्रलयङ्कारी व नादिये की सवारी करने वाले महादेव शिव शंकर की मूर्ति बनाकर उसकी पूजा करता है, जबकि आर्य जगत् इस पर्व पर उस शिव (ईश्वर) का बोध (ज्ञान) लेने का और देने का सङ्कल्प लेता है, जिस शिव (ईश्वर) की खोज का सङ्कल्प मूल शंकर ने इस शिवरात्रि के पर्व पर लिया था। बालक ने जब पिता से शंकर का मूल जानना चाहा, तो पिता ने बताया कि शिव का मूल (मुख्य निवास स्थान) कैलाश पर्वत है, तो बालक के अन्दर एक प्रश्न पैदा हुआ कि जब मूल (असली) शंकर का मूल (असली) स्थान कैलाश पर्वत है तो फिर यहाँ नकली शिव में असली शिव को खोजने की चेष्टा क्यों करूँ? बस! फिर क्या था, निकल पड़ा मूलशंकर शंकर के मूल को जानने के लिए। शंकर के मूल को तलाशते-तलाशते मूलशंकर बीहड़ वनों की खाक छानता रहा, शंकर के मूल को खोजते-खोजते मूलशंकर मठों में, अखाड़ों में और डेरों में धक्के खाता रहा; शंकर के मूल को ढूंढते-ढूंढते मूलशंकर नाथों का, वैरागियों का और गिरियों का सान्निध्य लेता रहा, शंकर के मूल को पाने की चाहना में मूलशंकर ने मूलशंकर नाम त्याग कर बृह्मचारी शुद्ध चैतन्य बन नैष्ठिक दीक्षा ग्रहण कर ली और शंकर के मूल प्राप्त करने के लिए ही शुद्ध चैतन्य ब्रह्मचारी ने महर्षि दयानन्द सरस्वती बनकर संन्यास की दीक्षा ग्रहण कर ली। किन्तु प्रिय पाठकगण! क्या मूलशंकर को शंकर का मूल मिला? नहीं। क्या ब्रह्मचारी शुद्ध चैतन्य को शंकर का मूल मिला? नहीं। क्या महर्षि दयानन्द को शंकर का मूल मिला? हाँ, केवल शंकर का मूल ही नहीं मिला अपितु मूलशंकर (असली ईश्वर) ही मिल गया। मैं कह सकता हूँ कि ब्रह्मा से जैमिनि पर्यन्त जिस निराकार ईश्वर की आराधना, उपासना हमारे ऋषियों ने की तथा जिस वेदोक्त और शास्त्रोक्त ईश्वर का अनुभव और साक्षात्कार हमारे महर्षियों/योगियों ने किया, उसी निराकार सर्वव्यापक, सर्वान्तिर्यामी ईश्वर का अनुभव महर्षि दयानन्द ने किया। मूलशंकर मूलशंकर को पाने का संकल्प लेता है, लेकिन उस संकल्प को पूरा महर्षि दयानन्द ने किया। मूलशंकर से महर्षि दयानन्द सरस्वती बनने तक के समय में घटित घटनाओं का यदि मैं वर्णन करने लगूँ, तो एक वृहदाकार ग्रन्थ तैयार हो जायेगा। पौराणिक शिवरात्रि को वैदिक शिवरात्रि का स्वरूप प्रदान करना महर्षि दयानन्द सरस्वती के तपोबल, मनोबल, आत्मिक बल, आध्यात्मिक बल व यौगिक बल का परिणाम था। संकुचित शिवरात्रि को व्यापक शिवरात्रि बनाना महर्षि दयानन्द सरस्वती के अथक प्रयासों का

thearyasamaj.org

परिणाम है। जिस शिवरात्रि में केवल घण्टा-घड़ियालों का नाद होता हो, जिस शिवरात्रि में केवल कपोल कल्पित शिव की स्तुति में स्तोत्रों का गायन होता हो, जिस शिवरात्रि में भक्ति की आड़ में पाखण्ड का प्रदर्शन होता हो और जिस शिवरात्रि में केवल पोपलीलाओं का बोलबाला हो, ऐसी भटकी शिवरात्रि को व्यापक दिशा प्रदान करने का श्रेय यदि किसी को जाता है, तो वह है युग प्रवर्तक महर्षि दयानन्द सरस्वती। व्यक्तिवाचक शिव की अपेक्षा गुणवाचक शिव ही हम सबके उपास्य, आराध्य, भजनीय, चिन्तनीय और प्रापणीय होने चाहिए। शिव के वास्तविक स्वरूप का वर्णन करते हुए ऋषि जी लिखते हैं - "ईश्वर सच्चिदानन्दस्वरूप, निराकार, सर्वशक्तिमान, न्यायकारी, दयालु, अजन्मा, अनन्त, निर्विकार, अनादि, अनुपम, सर्वाधार, सर्वेश्वर, सर्व-व्यापक, सर्वान्तर्यामी, अजर, अमर, अभय, नित्य, पवित्र और सृष्टिकर्ता है, उसी की उपासना करने योग्य है। आचार्य देव दयानन्द इसी शिव से समाज को अवगत कराने का अहर्निश प्रचार-प्रसार करते रहे तथा सारी दुनिया को समझाते रहे कि सच्चे शिव का सच्चा वर्णन पुराणों में नहीं, अपितु वेदों में, शास्त्रों में और उपनिषदों में है। हमें उसी शंकर (ईश्वर) को जानने का, मानने का, अपने मन में अनुभव करने का पुरुषार्थ करना चाहिए। इसी शिव को लेकर ऋषिवर ने काशी के धुरन्धर पण्डितों को, इस्लाम के मौलवियों को, ईसाइयों के पादरियों को तथा अन्य मतमतान्तरों के धुरन्धरों को शास्त्रार्थ में अनेक बार पराजित किया। शिवरात्रि के दिन मूलशंकर को खोजने निकले मूलशंकर ने महर्षि दयानन्द सरस्वती बनकर न केवल देश व समाज के विकृत आध्यात्मिक स्वरूप को सजाने-सँवारने का अविस्मरणीय कार्य किया, अपितु इसके साथ समाज से असमानता, अशिक्षा, पाखण्ड, विदेशी दासता को समूल नष्ट करने के लिए जनजागरण के अभियान का सफलतापूर्वक नेतृत्व किया। सदियों से खड़ी भेदभाव की दीवारों को ढहाने का व वेदज्ञान की पावन धारा बहाने का श्रेय यदि किसी को जाता है, तो वे हैं युग-प्रवर्तक महर्षि दयानन्द सरस्वती। सुराज का और स्वराज का सर्वप्रथम शंखनाद करने का, स्त्री-शूद्रों के समानाधिकार की सर्वप्रथम पहल करने का गुरुतम कार्य यदि किसी ने किया है, तो वह है युगप्रवर्तक महर्षि दयानन्द सरस्वती। दादा भाई नौरोजी ने ठीक ही कहा है "मैंने स्वराज्य शब्द सर्वप्रथम महर्षि दयानन्द से तथा उनके ग्रन्थों से सीखा है।" राम प्रसाद बिस्मिल ने महर्षि जी को तथा उनके अमर ग्रन्थ सत्यार्थ प्रकाश को अपने जीवन का प्रेरणा-स्रोत माना है तथा देश के प्रथम लोकसभा अध्यक्ष श्री अनन्तशयनम् आयंगर लिखते हैं - "यदि गान्धी राष्ट्रपिता हैं, तो महर्षि दयानन्द राष्ट्रपितामह हैं।" महर्षि जी लिखते हैं कि ब्रह्मा से लेकर जैमिनि पर्यन्त जितने भी ऋषि-महर्षि हुए हैं उनका मन्तव्य ही मेरा मन्तव्य है, उसको मानना और मनवाना ही मेरा उद्देश्य है तथा अपना निजी मत चलाने का मेरा लेशमात्र भी उद्देश्य नहीं है। "कृण्वन्तो विश्वमार्यम्" अर्थात् सारे विश्व को आर्य (श्रेष्ठ) बनाओ। उक्त वेद वाक्य ही महर्षि जी के जीवन का उद्देश्य था और इसी उद्देश्य को प्राप्त करने के लिए आपने 10 अप्रेल 1875 को मुम्बई में आर्य समाज की स्थापना की थी। स्वामी जी मन्त्रद्रष्टा तथा दूरदर्शी थे। स्वामी जी वेदों व शास्त्रों के मर्मज्ञ थे। स्वामी जी राष्ट्र में नव-चेतना का संचार करने वाले थे। असंख्य शिवरात्रियाँ आयीं और चली गयीं, लेकिन कभी किसी ने शिवरात्रि की सत्यता पर सवाल खड़ा नही किया। धन्य है वह बालक मूलशंकर, जिसने पुराणों के कल्पित शंकर के मूल पर ही प्रश्न

thearyasamaj.org

चिन्ह लगा दिया और फिर संसार के समस्त सुखों का मोह त्याग कर निकल पड़ा शंकर के मूल को तलाशने। उस मूल को आपने वेदों में पाया, बस फिर क्या था, आपने सारे संसार को कहा कि ऐ! दुनिया के भोले लोगो! वह सच्चा शिव तो कण-कण में व्यापक है तथा वेद शास्त्र उपनिषदों में उसका अत्यन्त विस्तार से व्याख्यान हो रहा है। जिस शिवरात्रि ने मूल शंकर को महर्षि दयानन्द सरस्वती बनने की राह पर चलाया, जिस शिवरात्रि ने मूलशंकर को सच्चे शिव का अन्वेषक बनाया; जिस शिवरात्रि ने भारतीय संस्कृति का सच्चा हितेषी पैदा किया, जिस शिवरात्रि ने वेदोद्धारक पैदा किया तथा जिस शिवरात्रि ने समग्र स्वतन्त्रता और "कृण्वन्तो विश्वमार्यम्" का उदघोषक पैदा किया, ऐसी शिवरात्रि धन्य हो। शिवरात्रि के इसी पावन स्वरूप को हम सारी दुनिया में प्रचारित - प्रसारित करने का संकल्प लें। आज भी दुनियाँ शिवरात्रि के सही स्वरूप को न जानने/समझने के कारण नकली शिव की पूजा में लगी हुई है, जिसके कारण हमारी पावन आध्यात्मिक विरासत पाखण्डों, आडम्बरों और तरह-तरह के गुरडमों के मकड़जाल में फँसी हुई है। ऋषि-बोधोत्सव के पावन अवसर पर हम सब यह संकल्प लें कि हम सब एकता के सूत्र में बँधकर समाज को एकता के सूत्र में बाँधने का प्रयास करेंगे; हम सब आर्य बनते हुए समाज को आर्य बनाएंगे; हम सब वेद मार्ग के सच्चे पथिक बनकर समाज को वेद मार्ग का सच्चा पथिक बनाएंगे; अपने जीवन से नास्तिकता के अंधेरे को मिटाकर समाज में नास्तिकता के अंधेरे को मिटायेंगे, हम सब ऋषि के आदर्शों को अपनाते हुए समाज को ऋषि के आदर्शों को अपनाने की प्रेरणा देंगे तथा स्वामी जी के सपनों का राष्ट्र हम तभी बना पायेंगे, जब हमारे संकल्पों में, हमारे व्रतों में और हमारे उद्देश्यों में आचार्य देव दयानन्द के सपनों का भारत होगा तथा शिवरात्रि का ऋषि द्वारा खींचा मानचित्र हमारे हृदय में होगा।

□□

(१४ फरवरी)

दयानन्द जयन्ती

आर्यसमाज के संस्थापक महर्षि दयानन्द सरस्वती की जयन्ती फाल्गुन बदी दशमी को मनाई जाती है। इस अवसर पर केन्द्रीय सरकारी अवकाश नहीं होता है, जबकि अन्य पंथों के संस्थापकों की जयन्तियों पर अवकाश होता है। दयानन्द जी की उपेक्षा क्यों की जा रही है?

अतः मेरी भारत सरकार से मांग है कि वह **"दयानन्द जयन्ती"** पर सरकारी अवकाश आरम्भ करे ताकि, महर्षि की उपेक्षा का क्रम समाप्त हो।

स्वतन्त्र भारत में, गुड-फ्राइडे का केन्द्रीय सरकारी अवकाश अभी भी जारी है जो कि पूर्ण रूप से अनुचित है। जब किसी महापुरुष के मृत्यु-दिवस पर सरकारी अवकाश करने की परम्परा नहीं है फिर ईसा मसीह के मृत्यु-दिवस पर यह अवकाश क्यों जारी है? इसे बन्द किया जाएं।

आर्यो जागो और प्रयास करो।

(इन्द्रदेव गुलाटी, संचालक–वीर सावरकर पुस्तकालय एवं वाचनालय,
१८/१८६, टीचर्स कालोनी, बुलन्द शहर–२०३००१ (उ०प्र०)

thearyasamaj.org

सुनो स्वरूपानन्द जी! आप लगाकर ध्यान

(पं. नन्दलाल निर्भय, पत्रकार, भजनोपदेशक, पलवल (हरियाणा)

जगत्गुरु दयानन्द थे, ईश्वर भक्त महान।
देशभक्त धर्मात्मा, सत्‌वादी इंसान।।
सत्‌वादी इंसान, सदाचारी तपधारी।
वीर साहसी बली, महात्यागी उपकारी।।
चरित्रवान गुणवान, वेद प्रचारक नामी।
मानवता के पुंज, निराले थे वे स्वामी।।

भूल गया था वेदपथ, यह सारा संसार।
पोंगापंथी धर्म के, थे तब ठेकेदार।।
थे तब ठेकेदार, पाप का जोर यहाँ था।
पाखंडियों का आर्यवर्त्त में शोर यहाँ था।।
वेद विरोधी लोग, यहाँ आदर पाते थे।
ईश्वर भक्त महान, यहाँ धक्के खाते थे।।

देव दूत दयानन्द ने, किया वेद प्रचार।
काँप उठे थे धूर्तजन, सुन ऋषि की हुंकार।।
सुन ऋषि की हुंकार, नास्तिक खल दहलाए।
वैदिक पथ पर चलो, सभी ऋषि ने समझाए।।
कुरान, पुराण, इंजील, झूठ की हैं सब गठरी।
इन से कभी न स्वर्ग, बनेगी दुनियाँ सगरी।।

सुनो स्वरूपानन्द जी! आप लगा कर ध्यान।
वेदों के पथ पर चलो, यदि चाहो कल्याण।।
यदि चाहो कल्याण, पुराणों को तुम त्यागो।
निराकार जगदीश, मान लो, अब तो जागो।।

thearyasamaj.org

जग का स्वामी एक, न आप अनेक बनाओ।
सच्चाई उर धार, जगत में आदर पाओ।।

ईश्वर का सुमरन करो, आप सुधारो भूल।
साईं पूजा का सुनो, जड़ पूजा है मूल।।
जड़ पूजा है मूल, राष्ट्र के पतन का कारण।
करो आप अवतारवाद का शीघ्र निवारण।।
जड़ पूजा से हुई, लूट भारत की भारी।
घातक है अवतारवाद की, यह बीमारी।।

जगत् गुरु दयानन्द के मानो तुम उपकार।
सुख पाओगे संत जी! तज दो बुरे विचार।।
तज दो बुरे विचार, महामानव बन जाओ।
आडम्बर दो त्याग, जगत् में नाम कमाओ।।
याद रखो! संसार, आपका यश गाएगा।
नाम स्वरूपानन्द, सार्थक हो जाएगा।।

□□

पृष्ठ 8 का शेष

ध्यान देने योग्य बात है- ब्रह्मसंस्पर्श की जो कामना योगी प्रतिक्षण करता है, वह 'कामना' की श्रेणी में इसलिए नहीं आती कि उससे अविद्या का कोई संस्कार नहीं छूटता। भौतिक कामनाएँ हमारी प्रधान अविद्या-शरीर में अस्मिता - को बढ़ाती हैं, परंन्तु परमात्मा का स्पर्श हमारी विद्या को निरन्तर बढ़ाता है।

इस प्रकार, सुन्दर कविता द्वारा, गीता में समाधिस्थ होने के कुछ भिन्न आयाम दिए हुए हैं, जो कि साधक के जानने योग्य हैं। विस्तृत प्रक्रिया और साधनों के लिए तो योगी को पतञ्जलि का योगदर्शन पढ़ना अनिवार्य ही है। इस विषय में पुनः-पुनः अभ्यास और भौतिक विषयों में अनासक्ति के महत्व को दोनों गीता और योगदर्शन मानते हैं- अभ्यास और वैराग्य द्वारा यह अतीव चंचल मन वश में लाया जा सकता है- यह ढाढस कृष्ण अर्जुन को, अर्थात् हम को देते हैं-

असंशयं महाबाहो मनो दुर्निग्रहं चलम्।
अभ्यासेन तु कौन्तेय वैराग्येण तु गृह्यते।।
गीता 6/35।।

अभ्यास तो किसी भी कार्य में हमें निपुण बनाता है, सो ध्यान में भी। विरक्ति से हम संसार की चिन्ता करना बन्द कर देते हैं-वही चिन्ताएँ, जो हर समय हमारे चित्त को चलायमान रखती हैं! इन दो मन्त्रों को अपनाकर, थोड़ा ही सही परन्तु प्रतिदिन ध्यान अवश्य लगाएँ।

□□

thearyasamaj.org

शंकराचार्य जी बोलें तो, पर देर कर दी

(राजेशार्य आट्टा, मो.-09991291318)

प्रिय पाठकवृन्द! पिछले दिनों दूरदर्शन व समाचार - पत्रों में एक समाचार मुख्यतः छाया रहा, जिसने हिन्दू समाज में खलबली मचा दी। शंकराचार्य श्री स्वरूपानंद जी ने साईं बाबा को भगवान मानने से इनकार करते हुए हिन्दुओं को उसकी पूजा न करने का उपदेश दिया है, क्योंकि चालाक लोगों ने साईं बाबा (जिसके विषय में उसके भक्तों ने चमत्कारी कहानियाँ जोड़ रखी हैं) को हिन्दू मन्दिरों में राम-कृष्ण, शिव आदि के साथ पुजवा दिया। उसके नाम में भी परिवर्तन कर के ॐ साईं राम कर दिया। गायत्री मंत्र में भी परिवर्तन कर साईं का नाम घुसेड़ दिया है। साईं के नाम पर जागरण हो रहे हैं। इस हिन्दू समाज को पता भी नहीं चला और एक फकीर उनके आराध्य राम, कृष्ण, दुर्गा, शिव आदि से अधिक प्रभावशाली बन गया। शंकराचार्य जी ने अपने प्रभाव का प्रयोग करके अज्ञानतावश भ्रमित हुए हिन्दू समाज को सन्मार्ग दर्शाने का काम किया है। इसका प्रभाव भी हुआ है। कुछ सत्य प्रेमियों ने साईं पूजा को छोड़ा भी है।

साईं के मुस्लिम होने के कारण श्री शंकराचार्य जी ने साईं पूजा का विरोध किया, साथ ही यह भी तर्क दिया है कि साईं की पूजा से सम्बन्धित कोई मंत्र किसी वेद, पुराण में नहीं है, फिर साईं की पूजा कैसे की जा सकती है! यद्यपि वर्तमान हिन्दू धर्म प्राचीन वैदिक धर्म से बहुत दूर जा चुका है और उसी हिन्दू समाज का नेतृत्व शंकराचार्य जी कर रहे हैं, तथापि शंकराचार्य जी ने बोलने में देर कर दी, क्योंकि जब वेदों को प्रमाण मानकर महर्षि दयानन्द ने ईश्वर के अवतार होने का खण्डन किया था, तो कोई शंकराचार्य उनके समर्थन में नहीं आया। यदि इन्होंने और इनकी शिष्य मण्डली ने सत्य को ग्रहण करने का साहस दिखाया होता, तो स्वामी विवेकानन्द अपने गुरु रामकृष्ण परमहंस को अवतार घोषित करने की हिम्मत न दिखाते; उनकी आरती न उतारते; उनके मन्दिर न बनवाते।

पाठक जानते होंगे कि अपने गुरु रामकृष्ण परमहंस को अवतार प्रचारित करने के लिए स्वामी विवेकानन्द ने राम, कृष्ण आदि प्राचीन अवतारों (हिन्दू मान्यता के अनुसार) को तुच्छ और हेय माना है, कहीं-कहीं तो उनके अस्तित्व को भी नकार दिया है। देखिये-

इंग्लैण्ड से स्वामी ब्रह्मानन्द को पत्र (4 अक्तूबर 1895 ई०) लिखते हुए लिखा है- "जिन (रामकृष्ण परमहंस) की पवित्रता, प्रेम और ऐश्वर्य का राम, कृष्ण, बुद्ध, ईसा, चैतन्य आदि में कणमात्र प्रकाश है....। बुद्ध, कृष्ण आदि का तीन चौथाई हिस्सा कपोल-कल्पना के सिवा और क्या है?... बुद्ध, कृष्ण, ईसा पैदा हुए थे या नहीं, इसका कोई प्रमाण नहीं है...।"

स्वामी त्रिगुणातीतानंद को लिखा (27 अप्रैल 1896 ई.)- "पहले के अवतार ठीक थे, परन्तु श्री रामकृष्ण की उपासना होनी चाहिए।... उसके बिना हनुमान जैसी शक्ति से कोई उपदेश नहीं कर सकता।... यह याद रखो कि उनकी कृपा से बहुत से आदमी देवताओं की महिमा प्राप्त करेंगे- जहाँ उनकी कृपादृष्टि पड़ेगी, वहाँ यही परिणाम दिखाई देगा... आज्ञापालन पहला धर्म है। अब जो मैं तुमसे कहता हूँ उसे उत्साह पूर्वक करो।"

स्वामी रामकृष्णानन्द को अमेरिका से लिखा (1895 ई.)- "किसी नये उद्योग को आरम्भ करने से पहले श्रीरामकृष्ण (परमहंस) से प्रार्थना करो कि वे तुम्हें उत्तम मार्ग दिखाएँ।... उनके जन्म की तिथि से सत्ययुग आरम्भ हुआ है।... जो कोई... पुरुष या स्त्री... श्री रामकृष्ण की उपासना करेगा, वह चाहे कितना ही पतित क्यों न हो, तत्काल ही उच्चतम में परिणत हो जायेगा।... अक्षय

thearyasamaj.org

उनकी उपासना सब घरों में प्रचलित कर दें, चाहे ब्राह्मण हो या चाण्डाल, पुरुष हो या स्त्री... सबको उनकी पूजा का अधिकार है। जो प्रेम से उनकी पूजा करेगा, उसका सदा के लिए कल्याण हो जायेगा।"

अवतार की अवधारणा में पले हिन्दू समाज में इसके विरुद्ध कोई स्वर सुनाई नहीं दिया, अपितु स्वामी विवेकानन्द को विदेशों में हिन्दू-धर्म-प्रचारक के रूप में सम्मान दिया। फिर तो यहाँ स्वयं को राम, कृष्ण आदि का अवतार बताने वाले पैदा होते चले गये। दादा लेखराज शिव बाबा बन गया, कथावाचक सन्त अवतार बनकर पूजे जाने लगे। एक अवतार तो मुम्बई के फिल्म कलाकारों की कृपा से हुआ। सन्तोषी माता की फिल्म बनाई। उस व्यवसाय से जुड़े लोगों ने सन्तोषी माता के कलैण्डर छापे; सन्तोषी माता व्रत से सम्बन्धित पुस्तकें लिख दीं, शुक्रवार का व्रत शुरू कर दिया व सन्तोषी माता के मन्दिर बनवा दिये। तब श्री शंकराचार्य जी ने नहीं कहा कि सन्तोषी से सम्बन्धित कोई मंत्र वेद या पुराणों में नहीं है, फिर उसकी पूजा कैसे हो सकती है? गायत्री मन्त्र की मूर्ति बनानेवालों को कहा होता कि गायत्री का जप किया जाता है, पूजा नहीं। कभी कृष्ण का अवतार और कभी शिव बाबा बनने वालों का विरोध किया होता, तो ब्रह्माकुमारी नाम से अलग सम्प्रदाय नहीं खड़ा होता। राधा स्वामी और निरंकारी सम्प्रदाय वालों को शास्त्रार्थ के लिए ललकारा होता, तो हिन्दू समाज के भोले-भाले लोग टूटकर अलग न होते। यदि कबीर को पूर्ण ब्रह्म प्रचारित कर स्वयं को तत्त्वदर्शी सन्त बताने वालों का विरोध किया होता, तो समाज में विद्वेष का विष न फैलता।

ऐसी अन्धेरगर्दी में यदि किन्हीं भावुक शिष्यों ने साईं को अपना गुरु, पीर, अवतार आदि मानकर पूजना शुरू कर दिया हो, तो कोई आश्चर्य नहीं है। बाबा साईं लगभग एक सौ वर्ष पूर्व हो चुके हैं। आरम्भ में इनके कुछ शिष्य रहे होंगे, जो प्रायः सबके होते हैं। धीरे-धीरे श्रद्धा ने अन्धविश्वास का रूप लिया और उसका लाभ उठाकर चालाक लोगों ने फकीर साईं को चमत्कारी व अवतारी प्रचारित कर दिया। आज से 25-30 वर्ष पूर्व साईं-पूजा, कीर्तन, जागरण आदि का इतना प्रचार नहीं था, तब भी विरोध का कोई स्वर उठाया जा सकता था, पर ऐसा लगता है कि विरोध करने वाले सत्य पर नहीं हैं, क्योंकि सृष्टि के निर्माता, संचालक व संहारक को वे भी अपनी इच्छानुसार खिलाते-पिलाते, सुलाते जगाते, नहलाते व पहनाते हैं। जब तक वैदिक सिद्धान्त के अनुसार ईश्वर को सर्वव्यापक, जन्म मरण (अवतार) से रहित, सर्वशक्तिमान (अपने कार्य के लिए किसी की सहायता न लेने वाला), सर्वान्तर्यामी, न्यायकारी (कर्मफल में पक्षपात न करने वाला), अकाम (किसी भी प्रकार के भौतिक पदार्थ व सुख की इच्छा न करने वाला), अद्वितीय (जिससे बढ़कर व बराबर दूसरा कोई नहीं है) नहीं माना जाएगा, तब तक ऐसे अवतार बनने-बनाने वाले हाते ही रहेंगे। इनका उद्देश्य अज्ञानी लोगों को भ्रमित कर अपने जाल में फँसाए रखना ही होता है।

गुरु के प्रति श्रद्धा रखना अनिवार्य है, पर गुरु गुरु (सन्मार्ग दर्शाने वाला) की ही भूमिका में रहे, स्वयं ईश्वर न बने, तभी कल्याण होगा। आज के अधिकतर गुरु अपने चेलों को अपने से आगे (परमात्मा की तरफ) जाने ही नहीं देते। अपना विशेष गुरुमंत्र, अभिवादन शब्द, अपनी अलग पहचान (गले में लटकाने वाला लॉकेट) देकर तथाकथित गुरु समाज को बाँट रहे हैं। यदि ये एक ईश्वर की उपासना सिखाते, तो सभी गुरुओं द्वारा दिया गया गुरुमंत्र (जो वास्तव में मन्त्र नहीं होता है) एक ही होता।

लगभग वर्ष भर पूर्व डेरा सच्चा सौदा सिरसा की पत्रिका में एक चित्र व समाचार छपा- सर्वधर्म समभाव- 'हिन्दू मन्दिरों की सफाई करते डेरा-प्रेमी'। मैं यह पढ़कर हैरान हो गया कि क्या डेरा-प्रेमी अपने आपको हिन्दू नहीं मानते? और क्या हिन्दू इनसे अलग धर्म है, जो हिन्दू-मन्दिरों की सफाई को सर्वधर्मसमभाव दिखा

thearyasamaj.org

दिया?

मेरे गाँव में कई वर्ष पूर्व किसी गुरु का सत्संग होना था। गाँव भर में मुनादी हो गई। शाम को कन्या विद्यालय का प्रांगण सत्संग प्रेमियों से भर गया। मैं भी गया था सत्संग सुनने। सत्संग प्रारम्भ हुए 10-15 मिनट ही हुई थी कि 25-30 लोगों की टोली खड़ी हुई और चल पड़ी। मैंने कहा- बैठो, सत्संग है कुछ अच्छी बात सुनने को मिलेगी। वे बोले- यह हमारे बाला नहीं है और चल दिये। इसी तरह कुछ-कुछ देर बाद मण्डली उठती और चल देती। कुछ ही समय में पाण्डाल लगभग खाली हो गया। सर्वधर्मसमभाव का दिखावा करने वाले तथाकथित गुरुओं के षड्यन्त्र को मैंने तब अनुभव किया था कि यह हिन्दू समाज तो संतरे की तरह अन्दर से बिल्कुल अलग हो चुका है। क्या श्री शंकराचार्य जी ने इस पर कभी विचार किया और इस षड्यन्त्र के विरुद्ध मुँह खोला? हाँ, एक बार आवाज सुनी थी श्री शंकराचार्य जी की- सती प्रथा के समर्थन में और एक बार आवाज सुनी थी- महिलाओं को वेदमंत्र बोलने के अधिकार से वंचित करने में। दोनों बार उन्हें आर्यसमाज के विरोध का सामना करना पड़ा। (स्मरण रहे, उपरोक्त कथन अलग-अलग शंकराचार्यों के हैं)

सती प्रथा (पति की चिता पर साथ ही जीवित पत्नी को जलाना) को अमानवीय व अवैदिक घोषित करते हुए आर्य समाज ने अपने संन्यासियों के नेतृत्व में पदयात्रा की और इस विषय पर शंकराचार्य को शास्त्रार्थ की चुनौती दी थी। दूसरी बार महिला वेदाधिकार विषय पर कन्या गुरुकुल वाराणसी की आचार्या प्रज्ञा देवी ने वैदिक विदुषी गार्गी के इतिहास को दोहराते हुए शंकराचार्य को शास्त्रार्थ के लिए ललकारा, तो शंकराचार्य ने यह कहकर कि हम बेटियों से शास्त्रार्थ नहीं करते, अपना पीछा छुड़ा लिया, पर विदुषी आचार्या ने सिंहगर्जना करते हुए कहा था- "बेटी तो हम दयानन्द की हैं, तुम तो हमें पैर की जूती कहते हो।"

खैर, इस बार श्रीशंकराचार्य जी ने सत्य के निकट व समाज हितैषी बात बोली है। कुछ को इसमें राजनीति लगती है। भले हो, फिर भी हम शंकराचार्य जी को धन्यवाद करते हैं, क्योंकि इससे साईं के कुछ भक्त (हिन्दू) अवश्य ही सुबह के भूले शाम को घर लौटे हैं अन्यथा भविष्य में वैसी दुर्घटना होने का डर था, जैसा श्रीमती वीरेन्द्र सन्धु ने 'युगद्रष्टा भगतसिंह...' में लिखा है- "काठियावाड़ में खोजा जाति थी। हिन्दुओं की इस उपजाति ने किसी मुसलमान को गुरु बना लिया था, पर उसके आचार-विचार सब हिन्दुओं के ही रहे। गुरु मुसलमान और आचार विचार हिन्दू इस द्वैत को मिटाने के लिए उन्नीसवीं सदी में कुछ बुजुर्गों ने विचार कर पण्डितों की राजधानी काशी से व्यवस्था माँगी कि हम उनके ही हैं, हमें स्वीकार कर लिया जाए। पर पण्डितों ने मना कर दिया। इससे खोजा जाति में उग्र प्रतिक्रिया हुई। हिन्दु मत के जो चिह्न जाति में थे, उन्हें तेजी से हटाया गया। नाम बदले गये। दरवाजों पर लिखे 'राम-राम' शब्द मिटाए गए। पण्डितों की जगह मौलवी ने ली। जब यह प्रतिक्रिया अपने पूरे उग्र रूप में काम कर रही थी, तब जिन्ना का जन्म हुआ, जिसने पाकिस्तान बनाने की हठ कर लाखों लोग मरवाए।"

यदि शंकराचार्य जी राष्ट्र व समाज हित में सजग रहेंगे, तो इतिहास की पुनरावृत्ति से बचा जा सकता है। हिन्दू समाज के कथावाचक (राधे-राधु की धुन पर नाचने-नचाने वाले) गुरु भी स्वार्थ छोड़कर राष्ट्र-धर्म अपनाएँ, तो छिन्न-भिन्न होता जा रहा हिन्दू समाज संगठित हो सकता है। आर्यसमाज तो अपने काम में लगा हुआ है, फिर भी शंकराचार्य आदि की हिन्दू समाज में विशेष प्रतिष्ठा है और कर्तव्य-पालन से प्रतिष्ठा बढ़ती है, इसे सभी जानते हैं। अन्यथा मनु महाराज ने कहा है-

यो ज्येष्ठो ज्येष्ठवृत्तिः स्यान्मातेव स पितेव ●●
अज्येष्ठवृत्तिर्यस्तु स्यात्सः संपूज्यस्तु बन्धुवत्।।

❑❑

thearyasamaj.org

शंका समाधान

(डॉ0 विवेक आर्य, मो- 09310679090)

क्या वेदों में पशुबलि, माँसाहार आदि का विधान है?

वेदों के विषय में सबसे अधिक प्रचलित अगर कोई शंका हैं, तो वह है कि क्या वेदों में पशुबलि, माँसाहार आदि का विधान है?

इस भ्रान्ति के होने के मुख्य-मुख्य कुछ कारण हैं। सर्वप्रथम तो पाश्चात्य विद्वानों जैसे मैक्समूलर, ग्रिफ्फिथ आदि द्वारा यज्ञों में पशुबलि, माँसाहार का विधान मानना, द्वितीय मध्य काल के आचार्यों जैसे सायण, महीधर आदि का यज्ञों में पशुबलि का समर्थन करना, तीसरा ईसाइयों, मुसलमानों आदि द्वारा माँस-भक्षण के समर्थन में वेदों की साक्षी देना, चौथा साम्यवादी अथवा नास्तिक विचारधारा के समर्थकों द्वारा सुनी-सुनाई बातों को बिना जाँचे बार-बार रटना। किसी भी सिद्धांत अथवा किसी भी तथ्य को आँख बन्द कर मान लेना बुद्धिमान लोगों का लक्षण नहीं है। हम वेदों के सिद्धांत की परीक्षा वेदों की साक्षी द्वारा करेंगे, जिससे हमारी भ्रान्ति का निराकरण हो सके।

शंका- क्या वेदों में मांस-भक्षण का विधान है?

समाधान- वेदों में मांस-भक्षण का स्पष्ट निपेध किया गया है। अनेक वेद-मन्त्रों में स्पष्ट रूप से किसी भी प्राणी को मारकर खाने का स्पष्ट निषेध किया गया है। जैसे-

हे मनुष्यो। जो गौ आदि पशु हैं, वे कभी भी हिंसा करने योग्य नहीं हैं- यजुर्वेद 1/1

जो लोग परमात्मा के सहचरी प्राणी मात्र को अपनी आत्मा के तुल्य जानते हैं अर्थात् जैसे अपना हित चाहते हैं, वैसे ही अन्यों में भी वर्तते हैं- यजुर्वेद 40/7

हे दाँतों, तुम चावल खाओ, उड़द खाओ और तिल खाओ। तुम्हारे लिए यही रमणीय भोज्य पदार्थों का भाग हैं। तुम किसी भी नर और मादा की कभी हिंसा मत करो।- अथर्ववेद 6/140/2

वे लोग जो नर और मादा, भ्रूण और अंडों के नाश से उपलब्ध हुए मांस को कच्चा या पकाकर खाते हैं, हमें उनका विरोध करना चाहिए- अथर्ववेद 8‘6‘23

निर्दोषों को मारना निश्चित ही महापाप है, हमारे गाय, घोड़े और पुरुषों को मत मार।- अथर्ववेद 10/1/29

इन मन्त्रों में स्पष्ट रूप से यह सन्देश दिया गया है कि वेदों के अनुसार मांस-भक्षण निषेध है।

शंका- क्या वेदों के अनुसार यज्ञों में पशुबलि का विधान है?

समाधान- यज्ञ की महता का गुणगान करते हुए वेद कहते हैं कि सत्यनिष्ठ विद्वान् लोग यज्ञों द्वारा ही पूजनीय परमेश्वर की पूजा करते हैं।

यज्ञ शब्द जिस यज् धातु से बनता है, उसके देवपूजा, संगतिकरण और दान अर्थ हैं। इसलिए यज्ञो वै श्रेष्ठतमं कर्म एवं यज्ञो हि श्रेष्ठतमं कर्म इत्यादि कथन मिलते हैं। यज्ञ न करने वाले के लिए वेद कहते हैं कि जो यज्ञमयी नौका पर चढ़ने में समर्थ नहीं होते, वे कुत्सित, अपवित्र आचरण वाले होकर यहीं इस लोक में नीचे-नीचे गिरते जाते हैं।

एक ओर वेद यज्ञ की महिमा को परमेश्वर की प्राप्ति का साधन बताते हैं, वहीं दूसरी ओर वैदिक यज्ञों में पशुबलि का विधान भ्रांत धारणा मात्र हैं।

यज्ञ में पशुबलि का विधान मध्य काल की देन है।

thearyasamaj.org

प्राचीन काल में यज्ञों में पशुबलि आदि प्रचलित नहीं थे। मध्यकाल में जब गिरावट का दौर आया, तब मांसाहार, शराब आदि का प्रयोग प्रचलित हो गया। सायण, महीधर आदि के वेदभाष्य में मांसाहार, हवन में पशुबलि, गाय, अश्व, बैल आदि का वध करने की अनुमति थी, जिसे देखकर मैक्समूलर, विल्सन, ग्रिफ्फिथ आदि पाश्चात्य विद्वानों ने वेदों में मांसाहार का भरपूर प्रचार कर न केवल पवित्र वेदों को कलंकित किया, अपितु लाखों निर्दोष प्राणियों को कटवा कर मनुष्य जाति को पापी बना दिया, मध्य काल में हमारे देश में वाम-मार्ग का प्रचार हो गया था, जो मांस, मदिरा, मैथुन, मीन आदि से मोक्ष की प्राप्ति मानता था। आचार्य सायण आदि यूँ तो विद्वान् थे पर वाम-मार्ग से प्रभावित होने के कारण वेदों में मांस-भक्षण एवं पशु-बलि का विधान दर्शा बैठे। निरीह प्राणियों के तरह कत्लेआम एवं बोझिल कर्मकांड को देखकर ही महात्मा बुद्ध एवं महावीर ने वेदों को हिंसा से लिप्त मानकर उन्हें अमान्य घोषित कर दिया, जिससे वेदों की बड़ी हानि हुई एवं अवैदिक मतों का प्रचार हुआ जिससे क्षत्रिय-धर्म का नाश होने से देश को गुलामी सहनी पड़ी। इस प्रकार वेदों में मांसभक्षण के गलत प्रचार के कारण देश की कितनी हानि हुई, इसका अंदाजा नहीं लगाया जा सकता।

एक ओर वेदों में जीव रक्षा और निरामषि भोजन का आदेश है, तो दूसरी ओर उसके विपरीत उन्हीं वेदों में पशु आदि की यज्ञों में बलि तर्क संगत नहीं लगती है। स्वामी दयानंद ने वेदभाष्य में मांस भक्षण, पशुबलि आदि को लेकर जो भ्रान्ति देश में फैली थी, उसका निवारण कर साधारण जनमानस के मन में वेद के प्रति श्रद्धा भाव उत्पन्न किया। वेदों में यज्ञों में पशु-बलि के विरोध में अनेक मन्त्रों का विधान है। जैसे-

यज्ञ के विषय में अध्वर शब्द का प्रयोग वेद-मन्त्रों में हुआ है, जिसका अर्थ निरुक्त के अनुसार हिंसारहित कर्म है।

हे ज्ञानस्वरूप परमेश्वर, तू हिंसारहित यज्ञों (अध्वर) में ही व्याप्त होता है और ऐसे ही यज्ञों को सत्यनिष्ठ विद्वान् लोग सदा स्वीकार करते हैं।- ऋग्वेद 1/1/4

यज्ञ के लिए अध्वर शब्द का प्रयोग ऋग्वेद 1/1/8, ऋग्वेद 1/14/21, ऋग्वेद 1/128/4 ऋग्वेद 1/19/1, ऋग्वेद 3/21/1, सामवेद 2/4/2, अथर्ववेद 4/24/3, अथर्ववेद 1/4/2 इत्यादि मन्त्रों में इसी प्रकार से हुआ है। अध्वर शब्द का प्रयोग चारों वेदों में अनेक मन्त्रों में होना हिंसारहित यज्ञ का प्रमाण है।

हे प्रभु! मुझे सब प्राणी मित्र की दृष्टि से दखें, मैं सब प्राणियों को मित्र की प्रेममय दृष्टि से देखूँ, हम सब आपस में मित्र की दृष्टि से देखें।- यजुर्वेद 36/18

यज्ञ को श्रेष्ठतम कर्म के नाम से पुकारते हुए उपदेश है कि पशुओं की रक्षा करें।- यजुर्वेद 1/1

पति-पत्नी के लिए उपदेश है कि पशुओं की रक्षा करें।- यजुर्वेद 6/11

हे मनुष्य, तुम दो पैर वाले अर्थात् अन्य मनुष्यों एवं चार पैर वाले अर्थात् पशुओं की भी सदा रक्षा कर। यजुर्वेद 14/8

चारों वेदों में दिए अनेक मन्त्रों से यह सिद्ध होता है कि यज्ञों में हिंसारहित कर्म करने का विधान है एवं मनुष्य को अन्य पशु पक्षियों की रक्षा करने का स्पष्ट आदेश है।

शंका- क्या वेदों में वर्णित अश्वमेध, नरमेध, अजमेध, गोमेध में घोड़ा, मनुष्य, गौ की यज्ञों में बलि देने का विधान नहीं है? मेध का मतलब है मारना जिससे यह सिद्ध होता है?

thearyasamaj.org

समाधान- मेध शब्द का अर्थ केवल हिंसा नहीं है, मेध शब्द के तीन अर्थ हैं 1. मेधा अथवा शुद्ध बुद्धि को बढ़ाना 2. लोगों में एकता अथवा प्रेम को बढ़ाना। 3. हिंसा। इसलिए मेध से केवल हिंसा शब्द का अर्थ ग्रहण उचित नहीं है।

जब यज्ञ को अध्वर अर्थात् 'हिंसारहित' कहा गया है, तो उसके सन्दर्भ में 'मेध' का अर्थ हिंसा क्यों लिया जाये? बुद्धिमान व्यक्ति 'मेधावी' कहे जाते हैं और इसी तरह, लड़कियों का नाम मेधा, सुमेधा इत्यादि रखा जाता है, तो क्या ये नाम उनके हिंसक होने के कारण रखे जाते हैं या बुद्धिमान होने के कारण? अश्वमेध शब्द का अर्थ यज्ञ में अश्व की बलि देना नहीं है, अपितु शतपथ 13/1/6/3 और 13/2/2/3 के अनुसार राष्ट्र के गौरव, कल्याण और विकास के लिए किये जाने वाले सभी कार्य "अश्वमेध" हैं।

गौमेध का अर्थ यज्ञ में गौ की बलि देना नहीं है, अपितु अन्न को दूषित होने से बचाना, अपनी इन्द्रियों को वश में रखना, सूर्य की किरणों से उचित उपयोग लेना, धरती को पवित्र या साफ रखना - 'गोमेध' यज्ञ है। 'गो' शब्द का एक और अर्थ है-पृथ्वी। पृथ्वी और उसके पर्यावरण को स्वच्छ रखना 'गोमेध' कहलाता है।

नरमेध का अर्थ मनुष्य की बलि देना नहीं है, अपितु मनुष्य की मृत्यु के बाद उसके शरीर का वैदिक-रीति से दाह संस्कार करना नरमेध यज्ञ है। मनुष्यों को उत्तम कार्यों के लिए प्रशिक्षित एवं संगठित करना नरमेध या पुरुषमेध या नृमेध यज्ञ कहलाता है।

अजमेध का अर्थ बकरी आदि की यज्ञ में बलि देना नहीं है, अपितु अज कहते हैं बीज, अनाज या धान आदि कृषि की पैदावार बढ़ाना है, अजमेध का सीमित अर्थ अग्निहोत्र में धान आदि की आहुति देना है।

शंका- यजुर्वेद मन्त्र 24/29 में हस्तिनऽआलभते अर्थात् हाथियों को मारने का विधान है?

समाधान- 'लभ्' धातु से बनने वाले आलभ शब्द का अर्थ मारना नहीं अपितु अच्छी प्रकार से प्राप्त करना, स्पर्श करना या देना होता है हस्तिन शब्द का अर्थ अगर हाथी लें, तो इस मंत्र में राजा को अपने राज्य के विकास हेतु हाथी आदि को प्राप्त करना, अपनी सेनाओं को सुदृढ़ करना बताया गया है। यहाँ पर हिंसा का कोई विधान नहीं है।

पारस्कर सूत्र 2/2/16 में कहा गया है कि आचार्य ब्रह्मचारी का आलभ अर्थात् हृदय का स्पर्श करता है। यहाँ पर आलभ का अर्थ स्पर्श आया है।

पारस्कर सूत्र 1/8/8 में ही आया कि वर वधु के दक्षिण कंधे के ऊपर हाथ ले जाकर उसके हृदय का स्पर्श करे। यहाँ पर भी आलभ का अर्थ स्पर्श आया हैं।

अगर यहाँ पर आलभ शब्द का अर्थ मरना ग्रहण करें, तो यह कैसे युक्तिसंगत एवं तर्क संगत सिद्ध होगा? इससे सिद्ध होता है कि आलभ शब्द का अर्थ ग्रहण करना, प्राप्त करना अथवा स्पर्श करना है।

शंका- वेद, ब्राह्मण एवं सूत्रग्रंथों में संज्ञपन शब्द आया है, जिसका अर्थ पशु को मारना है?

समाधान- संज्ञपन शब्द का अर्थ -ज्ञान देना, दिलाना तथा मेल कराना है।

अथर्ववेद 6/10/14-15 में लिखा है कि तुम्हारे मन का ज्ञानपूर्वक अच्छी प्रकार (संज्ञपन) मेल हो, तुम्हारे हृदयों का ज्ञानपूर्वक अच्छी प्रकार (संज्ञपन) मेल हो।

इसी प्रकार शतपथ ब्राह्मण 1/4 में एक आख्यानिका है, जिसका अर्थ है- मैं वाणी तुझ मन से अधिक अच्छी

thearyasamaj.org

हूँ, तू जो कुछ मन में चिंतन करता है, मैं उसे प्रकट करती हूँ, मैं उसे अच्छी प्रकार से दूसरों को जतलाती हूँ (संज्ञपयामि)

संज्ञपन शब्द का मेल के स्थान पर हिंसापरक अर्थ करना अज्ञानता का परिचायक है।

शंका- वेदों में गोघ्न अर्थात् गायों को वध करने का आदेश है।

समाधान- गोघ्न शब्द में हन् धातु का प्रयोग है जिसके दो अर्थ बनते हैं हिंसा और गति। गोघ्न में उसका गति अथवा ज्ञान, गमन, प्राप्ति विषयक अर्थ है। मुख्य भाव यहाँ प्राप्ति का है, अर्थात् जिसे उत्तम गौ प्राप्त कराई जाये।

हिंसा के प्रकरण में वेद का उपदेश गौ की हत्या करने वाले से दूर रहने का है।

ऋग्वेद 1/114/110 में लिखा है-जो गोघ्न- गौ की हत्या करने वाला है, वह नीच पुरुष है, वह तुमसे दूर रहे।

वेदों के कई उदाहरणों से पता चलता है कि 'हन्' का प्रयोग किसी के निकट जाने या पास पहुंचने के लिए भी किया जाता है। उदाहरण में अथर्ववेद 6/101/1 में पति को पत्नी के पास जाने का उपदेश है। इस मंत्र का यह अर्थ कि पति पत्नी के पास जाये उचित प्रतीत होता है ना कि पति द्वारा पत्नी को मारना उचित सिद्ध होता है। इसलिए हनन का केवल हिंसा अर्थ गलत परिप्रेक्ष में प्रयोग करना भ्रम फैलाने के समान है।

शंका- वेदों में अतिथि को भोजन में गौ आदि का मांस पका कर खिलाने का आदेश है।

समाधान- ऋग्वेद के मंत्र 10/68/3 में अतिथिनीर्गाः का अर्थ अतिथियों के लिए गौएँ किया गया है।

यहाँ पर जो भ्रम हुआ है, उसका मुख्य कारण अतिथिनी शब्द को समझने की गलती के कारण हुआ है। यहाँ पर उचित अर्थ बनता है, ऐसी गौएँ जो अतिथियों के पास दानार्थ लाई जायें, उन्हें दान की जायें।

Monier Williams ने भी अपने संस्कृत इंग्लिश शब्दकोश में अतिथिग्व का अर्थ "To whom guests should go" (P-14) अर्थात् जिसके पास अतिथि प्रेम वश जायें, ऐसा किया हैं, श्री Bloomefield ने भी इसका अर्थ "Presenting cows to guests" अर्थात् अतिथियों को गौएं भेंट करने वाली ही किया है, अतिथि को गौ-मांस परोसना कपोलकल्पित है।

शंका- वेदों में बैल को मार कर खाने का आदेश है।

समाधान- यह भी एक भ्रान्ति है कि वेदों में बैल को खाने का आदेश है। वेदों में जैसे गौ के लिए अघ्न्या अर्थात् न मारने योग्य शब्द का प्रयोग है, उसी प्रकार से बैल के लिए अघ्न्य शब्द का प्रयोग हैं। यजुर्वेद 12/73 में अघन्या शब्द का प्रयोग बैल के लिए हुआ है। इसकी पुष्टि सायणाचार्य ने काण्वसंहिता में भी की है।

इसी प्रकार से अथर्ववेद 9/4/17 में लिखा है कि बैल सींगों से अपनी रक्षा स्वयं करता है, परन्तु मानव समाज को भी उसकी रक्षा में भाग लेना चाहिए।

अथर्ववेद 9/4/19 मंत्र में बैल के लिए अघन्य और गौ के लिए अघन्या शब्दों का वर्णन मिलता है। यहाँ पर लिखा है कि जो ब्राह्मणों को ऋषभ (बैल) का दान करता है, उसकी गौएँ संतान आदि उत्तम रहती हैं।

इन उदाहरणों से यह सिद्ध होता है कि गौ के साथ-साथ बैल की भी रक्षा का वेद सन्देश देते हैं।

शंका- वेद में वशा/वंध्या अर्थात् वृद्ध गौ अथवा बैल (उक्षा) को मारने का विधान है।

thearyasamaj.org

समाधान- शंका का कारण 8/4/11 मंत्र के अनुसार वन्ध्या गौओं की अग्नि में आहुति देने का विधान बताया गया है। यह सर्वथा अशुद्ध है।

इस मंत्र का वास्तविक अर्थ निघण्टु 3/3 के अनुसार यह है कि जैसे महान सूर्य आदि भी जिसके प्रलयकाल में (वशा) अन्न व भोज्य के समान हो जाते हैं। इसका शतपथ 5/1/3 के अनुसार अर्थ है-पृथ्वी भी जिसके (वशा) अन्न के समान भोज्य है, ऐसे परमेश्वर की नमस्कार पूर्वक स्तुतियों से सेवा करते हैं। वेदों के विषय में इस भ्रान्ति के होने का मुख्य कारण वशा, उक्षा, ऋषभ आदि शब्दों के अर्थ न समझ पाना है।

यज्ञ प्रकरण में उक्षा और वशा दोनों शब्दों के औषधि-परक अर्थ का ग्रहण करना चाहिए, जिन्हें अग्नि में डाला जाता है।

सायणाचार्य एवं मोनियर विलियम्स के अनुसार उक्षा शब्द के सोम, सूर्य, ऋषभ नामक औषधि हैं।

वशा शब्द के अन्य अर्थ अथर्ववेद 1/10/1 के अनुसार ईश्वरीय नियम वा नियामक शक्ति हैं। शतपथ 1/8/3/15 के अनुसार वशा का अर्थ पृथ्वी भी है/ अथर्ववेद 20/03/103/15 के अनुसार वशा का अर्थ संतान को वश में रखने वाली उत्तम स्त्री भी है।

इस सत्यार्थ को न समझ कर वेद मन्त्रों का अनर्थ करना निंदनीय है।

शंका- वेदादि धर्मग्रंथों में माष शब्द का उल्लेख हैं, जिसका अर्थ मांस खाना है।

समाधान- माष शब्द का प्रयोग 'माषौदनम्' के रूप में हुआ है। इसे बदल कर किसी मांसभक्षी ने मांसौदनम् अर्थ कर दिया है। यहाँ पर माष एक दाल के समान वर्णित है। इसलिए यहाँ मांस का तो प्रश्न ही नहीं उठता। आयुर्वेद (सुश्रुत संहिता शरीर अध्याय 2) गर्भवती स्त्रियों के लिए मांसाहार को सख्त मना करता है और उत्तम संतान पाने के लिए माष सेवन को हितकारी कहता है। इससे क्या स्पष्ट होता है।

यही कि माष शब्द का अर्थ मांसाहार नहीं अपितु दाल आदि को खाने का आदेश है। फिर भी अगर काई माष को मांस ही कहना चाहे, तब भी मांस को निरुक्त 4/1/3 के अनुसार मनन साधक, बुद्धिवर्धक और मन को अच्छी लगने वाली वस्तु जैसे फल का गूदा, खीर आदि कया गया है। प्राचीन ग्रंथों में मांस अर्थात् गूदा खाने के अनेक प्रमाण मिलते हैं जैसे चरक संहिता देखें में आम्रमांसं (आम का गूदा), खजूरमांस (खजूर का गूदा), तैत्तरीय संहिता 2/32/8 (दही, शहद और धान) को मांस कहा गया है।

इससे यही सिद्ध होता है कि वेदादि शास्त्रों में जहाँ पर माष शब्द आता है अथवा मांस के रूप में भी जिसका प्रयोग हुआ है, उसका अर्थ दाल अथवा फलों का मध्य भाग अर्थात् गूदा है।

शंका- वेदों में यज्ञ में घोड़े की बलि देने का और घोड़े का मांस पकाने का आदेश है।

समाधान- यजुर्वेद के 25 अध्याय में सायण, महीधर, उव्वट, गिफ्फिथ, मैक्समूलर आदि ने अश्व के हिंसापरक अर्थ किये हैं, इसका मुख्य कारण वाजिनम् शब्द के अर्थ को न समझना है। वाजिनम् का अश्व के साथ-साथ अन्य अर्थ हैं शूर, बलवान, गतिशील और तेज।

यजुर्वेद के 25/34 मंत्र का अर्थ करते हुए सायण लिखते हैं कि अग्नि से पकाए, मरे हुए तेरे अवयवों से जो मांस-रस उठता है, वह-वह भूमि या तृण पर न गिरे, वह चाहते हुए देवों को प्राप्त हो।

इस मंत्र का अर्थ स्वामी दयानंद वेद-भाष्य में लिखते

thearyasamaj.org

हैं- हे मनुष्य! जो ज्वर आदि से पीड़ित अंग हों, उन्हें वैद्यजनों से निरोग कराना चाहिए क्यूंकि उन वैद्यजनों द्वारा जो औषध दिया जाता है, वह रोगीजन के लिए हितकारी होता है एवं मनुष्य को व्यर्थ वचनों का उच्चारण न करना चाहिए, किन्तु विद्वानों के प्रति उत्तम वचनों का ही सदा प्रयोग करना चाहिए।

अश्व की हिंसा के विरुद्ध यजुर्वेद 13/47 मंत्र का शतपथकार ने पृष्ठ 668 पर अर्थ लिखा है कि अश्व की हिंसा न कर।

यजुर्वेद 25/44 के यज्ञ में घोड़े की बलि के समर्थन में अर्थ करते हुए सायण लिखते हैं कि हे अश्व! तू अन्य अश्वों की तरह मरता नहीं क्यूंकि तुझे देवत्व की प्राप्ति होगी और न हिंसित होता है क्यूंकि व्यर्थ हिंसा का यहाँ अभाव है। प्रत्यक्ष रूप में अवयव नाश होते हुए ऐसा कैसे कहते हो? इसका उत्तर देते हैं कि सुंदर देवयान मार्गों से देवों को तू प्राप्त होता है, इसलिए यह हमारा कथन सत्य है।

इस मंत्र का स्वामी दयानंद अर्थ करते हैं कि जैसे विद्या से अच्छे प्रकार प्रयुक्त अग्नि, जल, वायु इत्यादि से युक्त रथ में स्थिति हो के मार्गों से सुख से जाते हैं, वैसे ही आत्मज्ञान से अपने स्वरूप को नित्य जान के मरण और हिंसा के डर को छोड़कर दिव्य सुखों को प्राप्त हो।

पाठक स्वयं विचार करें कहाँ स्वामी दयानंद द्वारा किया गया सच्चा उत्तम अर्थ और कहाँ सायण आदि के हिंसापरक अर्थ। दोनों में आकाश-पाताल का भेद है। ऐसा ही भेद वेद के अन्य सभी मन्त्रों में है, जिनका अर्थ हिंसापरक रूप में किया गया है। अतः वे मानने योग्य नहीं हैं।

शंका- क्या वेदों के अनुसार इंद्र देवता बैल खाता है?

समाधान- इंद्र द्वारा बैल खाने के समर्थन में ऋग्वेद 10/28/3 और 10/86/14 मंत्र का उदाहरण दिया जाता है। यहाँ पर वृषभ और उक्षन् शब्दों के अर्थ से अनभिज्ञ लोग उनका अर्थ बैल कर देते हैं। ऋग्वेद में लगभग 20 स्थलों पर अग्नि को, 65 स्थलों पर इंद्र को, 11 स्थलों पर सोम को, 3 स्थलों पर पर्जन्य को, 5 स्थलों पर बृहस्पति को, 5 स्थलों पर रूद्र को वृषभ कहा गया है। व्याख्याकारों के अनुसार वृषभ का अर्थ यज्ञ है।

उक्षन् शब्द का अर्थ ऋग्वेद में अग्नि, सोम, आदित्य, मरुत आदि के लिए प्रयोग हुआ है।

जब वृषभ और उक्षन् शब्दों के इतने सारे अर्थ वेदों में दिए गये हैं, तब उनका व्यर्थ ही बैल अर्थ कर उसे इंद्र को खिलाना युक्तिसंगत एवं तर्कपूर्ण नहीं है।

इसी सन्दर्भ में ऋग्वेद में इंद्र के भोज्य पदार्थ निरामिष रूपी धान, करम्भ, पुरोडाश तथा पेय सोमरस हैं ना कि बैल को बताया गया है।

शंका- वेदों में गौ का क्या स्थान है?

समाधान- यजुर्वेद 8/43 में गाय का नाम इडा, रन्ता, हव्या, काम्या, चन्द्रा, ज्योति, अदिति, सरस्वती, महि, विश्रुति और अघन्या कहा गया है। स्तुति की पात्र होने से इडा, रमयित्री होने से रनता, इसके दूध की यज्ञ में आहुति दी जाने से हव्या, चाहने योग्य होने से काम्या, हृदय को प्रसन्न करने से चन्द्रा, अखंडनीय होने से अदिति, दुग्धवती होने से सरस्वती महिमशालिनी होने से महि, विविध रूप में श्रुत होने से विश्रुति तथा न मारी जाने योग्य होने से अघन्या कहलाती है।

अघन्या शब्द में गाय का वध न करने का सन्देश इतना स्पष्ट है कि विदेशी लेखक भी उसे भली प्रकार से स्वीकार करते हैं।

हे गौओ, तुम पूज्य हो, तुम्हारी पूज्यता मैं भी प्राप्त

thearyasamaj.org

करूँ।- यजुर्वेद 3/20

मैं समझदार मनुष्य को कहे देता हूँ कि तू बेचारी बेकसूर गाय की हत्या मत कर, वह अदिति है काटने-चीरने योग्य नहीं है।- ऋग्वेद 8/101/15

उस देवी गौ को मनुष्य अल्पबुद्धि होकर मारे-काटे नहीं।- ऋग्वेद 8/101/16

निरपराध की हत्या बड़ी भयंकर होती है, अतः तू हमारे गाय, घोड़े और पुरुष को मत मार।

- अथर्ववेद 10/1/29

गौएँ वधशाला में न जाएँ।- ऋग्वेद 6/28/4

गाय का वध मत कर।- यजुर्वेद 13/43

वे लोग मूर्ख हैं, जो कुत्ते से या गाय के अंगों से यज्ञ करते हैं।- अथर्ववेद 7/5/5

इसके अतिरिक्त भी वेदों में अनेक मंत्र गौरक्षा के लिए दिए गये हैं। पाठक विचार करें कि जब वेदों में गौरक्षा की इतनी स्पष्ट साक्षी है, तब उन्हीं वेदों में यज्ञ में पशु हिंसा का सन्देश कैसे हो सकता है।

शंका- वेदों में गौहत्या करने वाले के लिए क्या विधान है?

वेदों में गाय हत्यारे के लिए कठिन से कठिन दंड का विधान है।

जो गौहत्या करने वाला हो, उसे मृत्युदंड दिया जाये।- यजुर्वेद 30/18

हे गौओ! तुम प्रजाओं से सम्पन्न होकर उत्तम घास वाले चारागाहों में विचरो। सुखपूर्वक जिनसे जल पिया जा सके, ऐसे जलाशयों में से शुद्ध जल को पियो। चोर और घातक तुम्हारा स्वामी न बने, क्रूर पुरुष का शस्त्र भी तुम्हारे ऊपर न गिरे।- अथर्ववेद 4/21/7

गौहत्या करने वाले के लिए स्पष्ट कहा गया है कि यदि तू हमारे गाय, घोड़े आदि पशुओं की हत्या करेगा, तो हम तुझे सीसे की गोली से उड़ा देंगे।- अथर्ववेद 1/16/4

वेदों में गौहत्या पर मृत्युदंड का विधान होने के बाद भी मध्य काल में यज्ञों में पशुबलि प्रचलित होने का कारण राजाओं द्वारा संस्कृत एवं वेदज्ञान से अनभिज्ञ होना था। दंड देने का कर्त्तव्य राजाओं का है, जब राजा को ही यह नहीं सिखलाया गया कि गौ-हत्यारे को क्या दंड दे, तो वह कैसे दंड देते? इसके विपरीत यह बताया गया कि होम में बलि दिया गया पशु स्वर्ग को जाता है।

इन प्रमाणों से यही सिद्ध होता है कि यज्ञ में किसी भी पशु की बलि का कोई भी विधान वेदों के सत्य उपदेश के अनुकूल नहीं है एवं जो कुछ भी मध्य काल में प्रचलित हुआ, वह वेदों के मनमाने अर्थ करने से हुआ है, जो कि त्यागने योग्य है।

आधुनिक भारत में सायण, महीधर आदि भारतीय आचार्यों, मैक्समूलर, विल्सन, गिफ्फिथ आदि के प्रचलित वेदभाष्यों का जब स्वामी दयानंद ने सत्य अर्थ की दृष्टि से विश्लेषण किया, तब उन्होंने पाया कि वेदों के भाष्यों में वेदों की मूल भावना के विपरीत मनमाने अर्थ निकाले गये हैं। एक ओर भारतीय आचार्य वाममार्ग के प्रभाव में आकर वेदों को मांसभक्षण का समर्थक घोषित करने पर उतारू थे, तो दूसरी ओर विदेशी चिंतक अपनी मतान्धता के जोश में वेदों के स्वार्थपूर्ति के लिए निंदक अर्थ निकाल रहे थे, जिससे कि वेदों के प्रति भारतीय जनमानस में श्रद्धा समाप्त हो जाये और उनका मार्ग प्रशसत हो सके। धन्य हैं, स्वामी दयानंद, जिन्होंने अपनी दूरदृष्टि से इस षड्यन्त्र को न केवल पकड़ लिया, अपितु निराकरण के लिए वेदों का उचित भाष्य भी किया। हम सभी को स्वामी जी के इस उपकार का आभारी होना चाहिए। ❑❑

thearyasamaj.org

ईश्वर का भय

(श्री स्व. स्वामी दर्शनानन्द जी के प्रवचन के आधार पर)

ईशावास्यमिदं सर्वं यत्किञ्च जगत्यां जगत्।
तेनत्यक्तेन भुञ्जीथा मा गृधः कस्यस्विद्धनम्।
यजु० अ० 40 म० 1

अर्थ- हे जीव! यह सम्पूर्ण संसार जो दृष्टिगोचर हो रहा है या उसके जो भिन्न-भिन्न अवयव दिखाई देते हैं, वे सब ईश्वर के निवास स्थान हैं। जो मनुष्य परमात्मा की आज्ञाओं को भूल जाते हैं, वे दुःखों को भोगते हैं, इसलिये तू किसी का धन लेने की इच्छा मत कर।

यह कैसा उत्तम उपदेश है, जिसके समझने से मनुष्य सर्वदा पापों से बचकर सुख और शान्ति को प्राप्त कर सकता है। मनुष्य में डरने की स्वाभाविक देन है। जब मनुष्य कोई पाप करने लगता है, तो उस समय उसके चित्त में भय उत्पन्न होता है और वह उस पाप को छिप कर करने का प्रयत्न करता है। कोई मनुष्य ऐसा नहीं, जिसके हृदय में पाप करते समय भय न उपजता हो। इसी भय के कारण वह घर भीतर जाकर, किवाड़ बन्द करके और द्वार पर सहयोगियों को खड़ा करके पाप करता है। यदि मनुष्य को यह ज्ञान होता, कि मैं पाप करके किसी प्रकार भी दण्ड से नहीं बच सकता, तो वह कदापि पाप न करता, परन्तु मनुष्यों के हृदय में धार्मिक शिक्षा न होने के कारण उनको परमात्मा की सत्ता एवं सर्वव्यापकता का ज्ञान तो होता ही नहीं, इससे वे परमात्मा से न डरकर केवल मनुष्यों के भय से बचने का प्रयत्न करते हैं। वर्तमान समय में सबसे प्रथम तो मानुषिक भय गवर्नमेंट का है। वे जिसको इस प्रकार निवृत्त कर लेते हैं, कि इस बन्द घर में कोई देखता ही नहीं है। यदि कोई मनुष्य देख भी लेगा और वह गवर्नमेंट का कर्मचारी होगा, तो उसे कुछ घूंस दे दी जायेगी। इससे भी काम न चलेगा, तो झूठे साक्षी उपस्थित कर दिये जावेंगे, जिनसे कि न्यायालय से अवश्यमेव छुटकारा हो जावेगा। यदि इसमें भी सफलता न हुई, तो वकील (प्राड्.विवाक) करके मुकदमे को कानूनी कमजोरियों (राजकीय नियमों की त्रुटियों) से जीत जाउँगा और यदि इन बातों से भी काम न चला, तो न्यायाधीशों को पूरी घूंस देकर बच जाउँगा। ये विचार हैं, जिनके कारण मनुष्य गवर्नमेंट का भय होते हुए भी पाप करना नहीं छोड़ते। दूसरा भय जाति का है, यह तो आजकल जाता ही रहा। जिसका कारण यह है कि जाति में ऐसे मनुष्य बहुत थोड़े देखने में आयेंगे, जो स्वयं किसी-न-किसी पाप के अपराधी न हों। जब कोई मनुष्य किसी पापी को जाति-सभा के समक्ष में उपस्थित करने लगता है, तो यह विचार तुरन्त ही उसके मन में आ पहुँचता है कि वह भी मेरे दोष अवश्य प्रकट करेगा बस? वह अपने विचार को छोड़ देता है। तीसरा भय लोक लाज का है, सो इसका तो आजकल चिन्ह भी नहीं दिखाई देता। जब देश की यह दशा है, तो पापों का बढ़ना आवश्यक ही है। जब पाप अधिक होने लगेगा, तो दुर्भिक्ष, प्लेग, भूकम्प तथा लड़ाई-झगड़े आपत्तियों का आना अत्यावश्यकीय है, जिसका उपचार (इलाज) किसी मनुष्य के हाथ में नहीं, न गवर्नमेंट इसको रोक सकती है और न जाति ही उसका कोई रोक थाम कर सकती है, ऐसी अवस्था में मस्तिष्क पर धार्मिक शिक्षा का प्रभाव किये बिना मनुष्यों का पापों को छोड़ना बहुत कठिन है। प्राचीन काल में जब मनुष्य ईश्वर से डरते थे, तो उस समय संसार में पाप बहुत ही थोड़ा दिखाई देता था, परन्तु जब से वेदों की शिक्षा बन्द हो गई और जनता या तो नास्तिक हो गई या ईश्वर को एक-देशी मानने लगी, तो उनको पाप करते समय ईश्वर का भय

thearyasamaj.org

न रहा। वेदों की पवित्र शिक्षा के समय में पाप करना, अति दुष्कर जान पड़ता था, क्योंकि जब मनुष्य यह जानता है कि मेरे पापों का दण्ड देने वाला मेरे सम्मुख विद्यमान है, जिसको मैं किसी प्रकार की घूंस से प्रसन्न नहीं कर सकता। न झूठे साक्षियों से छुटकारा होगा, क्योंकि वह स्वयं देख रहा है, न वकील से काम चलेगा, क्योंकि वह सर्वज्ञ है, अतः वह किसी प्रकार धोखे में नहीं आ सकता है। न उसके राज्य से भाग कर कहीं जाया जा सकता है, अतः वह इससे भयभीत हो तुरन्त पापों को छोड़ देता है, परन्तु ईश्वर को नहीं मानना एक ऐसी बुराई है, जो मनुष्य को साहस दिलाती है और जिसके कारण वो पाप से नहीं बचता। वह जानता है कि जब पुलिस पकड़ने आवेगी, तो उसके मुकाबले में सफलता की आशा है। बहुधा राजा, महाराजा और नवाब आदिक तो अपने को पुलिस के भय से रहित ही समझते हैं। जब मनुष्य को यह विश्वास हो जावे कि जिस शक्ति के हाथ में मेरे पापों का फल देना है, वह इतना बलशाली है कि संसार के बड़े-से-बड़े महाराजा, लाखों सेना, हाथी, घोड़े खड्ग, भुशुण्डी (बन्दूक) तोप और डिनामेट के गोले आदि रखते हुये भी उसके वारेन्ट मौत (मृत्यु-संदेश) को एक मिनिट के लिए भी कोई नहीं रोक सकता, क्योंकि यह समस्त अस्त्र-शस्त्रादि तो बाह्य-आक्रमण के रोकने के निमित्त हैं, परन्तु पापों का दण्ड देनेवाली शक्ति तो भीतर विद्यमान है। कितना ही बड़ा दुर्ग बना लिया जाय, वह केवल बाह्य शक्तियों से बचाने के लिए लाभकारी होगा, आन्तरिक शक्ति से बचाने के लिए तो वह बिल्कुल निकम्मा है। जितने सहायक हों, वे भी देह-धारियों से बचा सकते हैं, परन्तु देहरहित निराकार ईश्वर पर इनका कोई प्रयोग नहीं हो सकता है। जितने शस्त्रास्त्र हैं, वे सब भी देहधारी पर ही चलाये जा सकते हैं।

जिस शक्ति से पाप करके हम किसी प्रकार नहीं बच सकते और न कोई साँसारिक साधन उसको रोक सकते हैं, ऐसी शक्ति से विमुख होना मानो अपने को दुःख के समुद्र में डुबोना है। मनुष्य दुःख का कारण जानकर किसी काम को नहीं करता। उसकी इच्छा तो सुख प्राप्त करने एवं दुःख से बचने की है, अतः वह पाप को दुःख का कारण जानते हुये कभी नहीं कर सकता। यदि संसार में दुःख से बचाने वाली कोई शक्ति है- तो वह ईश्वर का भय है, जिसका दृढ़ विश्वास होना चाहिये। यदि मनुष्य को यह विश्वास हो जावे, कि ईश्वर, संसार के प्रत्येक खण्ड में विद्यमान है, मेरे भीतर भी है, मैं किसी प्रकार उसकी दृष्टि से अपने पापों को नहीं छिपा सकता हूँ और न ईश्वर का पुत्र मुझे पाप करने पर दण्ड से बचा सकता है और न किसी की शफाअत (सुफारिश) से पापों से बचना हो सकता है और न किसी प्रकार के छापे तिलक तथा भेष-धारण करके पापों के फल से बचा सकता हूँ, तो वह कभी पाप न करेगा, जितने मतमतान्तर हैं, ये सब पाप बढ़ने के कारण हैं, क्योंकि ये ईश्वर को एकदेशी मानते हैं, जिससे मनुष्य के हृदय में उसका भय तनिक भी नहीं रहता है।

कतिपय मनुष्य तो यह विचार लेते हैं कि पाप करके "तोबा" कर लेंगे, तो परमात्मा हमारे पापों को क्षमा कर देगा परन्तु जब तनिक "तोबा" करने से ही पाप क्षमा हो जायेंगे, तो पापों से कोई क्यों बचेगा। किसी ने कहा कि पापों का भार मसीह उठाकर ले गया। भला! फिर ईसाई पाप करने से क्यों बचेंगे। किसी ने समझा कि गंगा स्नान से मुक्ति होगी और सहस्रों जन्म के पाप छूट जावेंगे। अब बताइए, यह मानने वाला पाप से क्यों डरेगा। आज कल तो गंगा जाने के लिए दो तीन रुपये से अधिक की आवश्यकता ही नहीं है। बस? जब तीन रुपये में ही पाप छूटने लगे तो फिर धनी क्यों पाप से डरेंगे। इस प्रकार इन

thearyasamaj.org

मतमतान्तर वालों ने ईश्वर को एकदेशी मान कर उसको सांसारिक गवर्नमेंट की भाँति पापों के हटाने से अशक्त बना दिया है।

बहुधा मनुष्य कहेंगे कि हम तो ईश्वर को एकदेशी नहीं मानते, परन्तु उनसे पूछें कि जब तुम्हारा ईश्वर एकदेशी ही नहीं, तो फिर उसके पैगम्बर (दूत) किस प्रकार हो सकते हैं, क्योंकि पैगम्बर का अर्थ पैगाम (संदेशा) लाने वाले के हैं और पैगाम सर्वदा दूर से आया करता है। दूरी सर्वदा एकदेशी पदार्थों के बीच में होती है। बस? पैगम्बर मानना ईश्वर को एकदेशी मानकर उसके भय से संसार को हटा उसे (संसार को) पापी बनाना है, जो मनुष्य कफ्फारा (ईसा द्वारा, गुनाहों से छूटने) से मोक्ष मानते हैं, वे मानो घूंस देकर परमेश्वर के दण्ड से बचना चाहते हैं

इसी भाँति जो लोग अवतार मानते हैं, वे भी ईश्वर को एकदेशी मानते हैं, नहीं तो वह पहिले किस शरीर में नहीं था, जहाँ उसने अवतार लिया।

इसी प्रकार किसी ने उसको सातवें आसमान पर आ बैठाया और किसी ने चौथे आसमान पर उसका स्थान ठहराया। कोई बैकुण्ठ में बताने लगा और कोई क्षीर-सागर में गोता खाने लगा। किसी ने गोलोक को उसका निवास स्थान बनाया और किसी ने कैलासवासी जा ठहराया। सारांश यह है, कि इन मतमतान्तरों के दीपकों ने अपने परिमित प्रकाश के कारण अपने प्रकाश के बाहर उसे न देख कर इतना ही बताया, जिससे यह समय आ गया कि चारों ओर पापों का समुद्र वेग से बहने लगा। लोग एक आने के लिए झूठ बोलने के लिए तैयार हैं अपनी आयु, ईश्वर भक्ति, धन के लिए गँवा देते हैं कतिपय मनुष्यों ने तो धन को परमेश्वर की मूर्ति भी बना दिया। भला? उन्हें वैराग्य किस प्रकार हो सकता है। वे समझते हैं कि यदि और किसी की सिफारिश न सुनी जाएगी, तो उसकी श्री जिसके संचय करने में हमारा समस्त जीवन व्यतीत हुआ है, जिसकी भक्ति हमने धर्म, कर्म और सत्-असत् का विचार छोड़ कर की है, जिसके लिए हमने लाखों पाप किए हैं, सहस्रों मनुष्यों को धोखे दिए, उसकी सिफारिश (अनुरोध) से तो अवश्य ही काम निकल आवेगा। ऐसे विचारों ने ही तो मनुष्य जाति के मस्तिष्क को हानि पहुँचाई है। नहीं-नहीं? उनको मनुष्य से पशु बना दिया है, क्योंकि पशु आगामी का विचार न करके केवल वर्तमान स्थिति के लिए ही प्रयत्न करता है, इसी प्रकार वर्तमान समय के मनुष्य, धर्म के द्वारा होने वाले भविष्य के प्रबन्ध को छोड़ कर धन से पूर्ण हो जाने वाले वर्तमान के प्रबन्ध में लग गये हैं। उनको यह ध्यान नहीं कि यह धन हमारे मरने पर हमारे संग नहीं जाएगा। इस बात का ध्यान उन्हें हो भी कैसे सकता है? क्योंकि मृत्यु तो आगे होगी और उन्होंने पशुओं से वह पाठ पढ़ लिया है कि आगामी की चिन्ता ही नहीं करनी है, केवल वर्तमान के लिए ही प्रबन्ध करना चाहिए- कही कारण है, कि सम्पूर्ण देश का धन अपने अधिकार में लाना चाहते हैं

यदि धर्म-दृष्टि से कोई ऐसा काम करे-तब तो कोई शिकायत का स्थान नहीं परन्तु यह तो अपने साथियों को हानि पहुँचाकर और उनको अपने वश में लाकर अपना दास बनाना चाहते हैं। उन्हें यह पता नहीं कि प्राकृतिक नियमानुकुल मनुष्य इस बात से असमर्थ है, कि बिना परोपकार किए अपना भला नहीं कर सकता। क्योंकि कुदरत (ईश्वरीय नियमों) ने मनुष्य के शरीर में भिन्न-भिन्न अवयव रख कर यह शिक्षा दी है, कि जिस प्रकार मनुष्य के शरीर का कोई अंग अपनी सहायता से आप ही लाभ नहीं उठा सकता, जब तक वह अन्य अवयवों को उसमें सम्मिलित न कर लेवे।

इस प्राकृतिक शिक्षा से विदित होता है कि यदि एक अवयव दूसरे अवयव से विरोध करके अपना काम

thearyasamaj.org

छोड़ दे अथवा उससे भी जो फल प्राप्त हो, उसे भी अपने पास रख ले, तो परिणाम यह होगा कि वह अवयव अवश्य नष्ट हो जायेगा, क्योंकि उस वस्तु से जो भोजन उसे मिलता था, वह न मिलेगा। कुदरत बतला रही है कि जिस प्रकार शरीर के सम्पूर्ण अवयव एक-दूसरे के लिए काम कर रहे हैं, इसी प्रकार प्रत्येक मनुष्य को दूसरों के लिए काम करना चाहिए, जिससे उसका अस्तित्व बना रहे अन्यथा अपने लिए काम करने में तो अपने जीवन को बनाये रखना निरा असम्भव होगा। सारांश यह कि स्वार्थ का नाश ही उन्नति का पहिला भाग है- इसीलिए नीतिकार ने कहा है-

अयं निजः इयं परो वेति गणना लघुचेतसाम्।
उदारचरितानान्तु वसुधैव कुटुम्बकम्।।

अर्थ- यह मेरा और यह दूसरों का है- थोड़ी बुद्धि वालों का ऐसा विचार हाता है, परन्तु जो बुद्धिमान् हैं, वह तो समस्त संसार को ही अपना कुटुम्ब समझते हैं। जब तक सम्पूर्ण जीवों को अपना न समझा जावेगा, तब तक मनुष्य को कुदरती तौर पर उत्तम कर्म करने की योग्यता ही नहीं होगी।

पृष्ठ 2 का शेष

में तबाही आ जावे। बेलपत्र शिव जी के वीर्य को पुष्ट करने के लिए चढ़ाता है। अरे पागल! तुझे शिव के वीर्य से क्या करना है। पुष्ट हो या न हो। पत्थर के लिंग में ज्वालामुखी फूटने की चिन्ता हर समय रहती है, तब ऐसे लिंगों को गहरे समुद्र-कुओं-नदी या तालाब में गहरे पानी में रखें, जिससे वह हर समय पर तर रहे और तेरी पानी चढ़ाने की मेहनत बच जाये अपने बेशकीमती समय को प्रभु भक्ति में लगाएँ या देश व समाज सेवा में लगा दें, तो देश व समाज के कल्याण के साथ तेरा जीवन भी सफल हो जावेगा। इन शिव-विष्णु के मंदिरों को गरीब बेघरबार लोगों को रहने को दे दें, मंदिरों से लगी जायदादों को शिक्षण संस्थानों को देकर देश के लाखों गरीब बच्चों को उचित शिक्षा द्वारा शिक्षित नागरिक बनने में सहयोग कर। हे शिव भक्त! इस सबके पुण्य तेरा लोक परलोक सुधार देंगे।

मेरी हिन्दू कौम! आँखें खोलकर देख, एक खुदा के मानने वालों ने संसार में साम्राज्य स्थापित कर लिया और खुदा ने उनकी मदद की। तुझे सदियों तक गुलाम बनाये रखा और तू सैकड़ों ईश्वर व देवी-देवताओं के चक्कर में पड़ी पिटती रही। तू शिवलिंग को पकड़े बैठी रही और वह पत्थर-पूजन ही तेरी बरबादी का कारण हुआ। सोमनाथ जैसे लाखों विशाल मंदिर इसी शिवलिंग पर अंधविश्वास के कारण बर्बाद हुए। सारा देश पंडे-पुजारियों के चक्कर में आकर देवताओं की मदद की आशा और विश्वास में बर्बाद हो गया। जो देवता अपनी मूर्ति की रक्षा यवनों से नहीं कर सके, मंदिरों में चोरों से अपने कपड़े-गहनों की रक्षा नहीं कर सकते, खाना-पानी हवा के लिये पुजारियों पर आश्रित हैं, कुत्ते-बिल्ली अपवित्र न कर दें तथा चोर चुरा नहीं ले जाय, इसलिये हर समय पुजारी तालों में बंद रखते हैं। ये भी कोई देवता हैं, तुम्हें क्या देंगे, विचार करो, मनुष्य हो। तुम्हें प्रभु ने हर काम सोच-समझकर करने के लिए बुद्धि दी है। मनुष्य का अर्थ ही मननशील होता है। अतः बुद्धि से काम लिया करो। मनुष्य जन्म बार-बार नहीं मिलता है, अंध-विश्वासों में बर्बाद कर देना बुद्धिमानी की बात नहीं है।

❑❑

आर./आर. नं० १६३३०/६७ फरवरी २०१५
Post in Delhi R.M.S
०५-११/२/२०१५
भार- ४० ग्राम

फरवरी 2015

रजिस्टर्ड नं० DL (DG -11)/8029/2015-17
लाईसेन्स नं० यू (डी०एन०) १४४/२०१५-१७
Licenced to post without prepayment
Licence No. U (DN) 144/2012-14

पाठकों से निवेदन

१. अपने पत्रों में अपनी ग्राहक संख्या अवश्य ही लिखा करें, अन्यथा कार्यवाही सम्भव नहीं होगी।
२. १५ तारीख तक प्रतीक्षा करके ही दुबारा अंक मँगाएं, यदि अंक न पहुँचा हो।
३. यदि आप अपना पता बदलवायें तो यह ध्यान रखें कि बदले हुए पते पर अंक-प्रेषण एक माह बाद आरम्भ होगा।
४. अंक के रेपर पर अपना पता चैक कर लिया करें। यदि कोई त्रुटि हो, तो सूचना दे दिया करें।
५. जिन ग्राहकों का शुल्क समाप्त है, अविलम्ब भेजने की कृपा करें।

— दिनेश कुमार शास्त्री
कार्यालय व्यवस्थापक
मो०-९६५०५२२७७८

ओ३म्

भारत में फैले सम्प्रदायों की निष्पक्ष व तार्किक समीक्षा के लिए उत्तम कागज़, मनमोहक जिल्द, सुन्दर आकर्षक छपाई एवं (द्वितीय संस्करण से मिलान कर शुद्ध प्रामाणिक संस्करण)

सत्य के प्रचारार्थ

सत्यार्थ प्रकाश

सत्य के प्रचारार्थ

• प्रचार संस्करण (अजिल्द) 23×36÷16	मुद्रित मूल्य 50 रु.	प्रचारार्थ 30 रु.	प्रचारार्थ मूल्य पर कोई कमीशन नहीं
• विशेष संस्करण (सजिल्द) 23×36÷16	मुद्रित मूल्य 80 रु.	प्रचारार्थ 50 रु.	
• स्थूलाक्षर सजिल्द 20×30÷8	मुद्रित मूल्य 150 रु.		प्रत्येक प्रति पर 20% कमीशन

10 या 10 से अधिक प्रतियाँ लेने पर विशेष अतिरिक्त कमीशन

कृपया, एक बार सेवा का अवसर अवश्य दें और महर्षि दयानन्द की अनुपम कृति सत्यार्थ प्रकाश के प्रचार प्रसार में सहभागी बनें

आर्ष साहित्य प्रचार ट्रस्ट
427, मन्दिर वाली गली, खारी बावली, दिल्ली-6
Ph. :011-43781191, 09650622778
E-mail : aspt.india@gmail.com

छपी पुस्तक/पत्रिका

श्री सेवा में.................................
ग्राम.................................
डा0 ....
जिला.................................

प्रकाशक : धर्मपाल आर्य, ४२७, मन्दिर वाली गली, नया बांस, खारी बावली, दिल्ली-६
मुद्रक : तिलक प्रिंटिंग प्रेस, २०४६, बाजार सीताराम, दिल्ली-६